CHAPTER 22

HINDI

Doctoral Theses

01. उपाध्याय (अभिषेक)

नवजागरण की अवधारणा और हिंदी रंगमंच ।

निर्देशिका : प्रो. कुसुमलता मलिक

Th 27310

सारांश

प्रस्तुत शोध प्रबंध रंगमंच क्षेत्र में होने वाली नवीन परिवर्तनों को रेखांकित करते हुए नवजागरण के भावबोध से अनुप्राणित कथा विन्यास और विविध शैली रूपों का परिचय प्रदान करता है । भारतीय नवजागरण में रंगमंच की भूमिका को स्पष्ट करते हुए वर्तमान समय में इसके स्वरूप तथा इसकी भविष्य दृष्टि को अन्वेषित करने का कार्य करता है । भारतीय साहित्य, संस्कृति और लोकधारा में जाग्रत भावबोध की सार्वकालिक प्रतिष्ठा रही है । इसी कारण हमारे यहाँ के विविध वाङ्मयों में इसके बहुविध स्वरूपों का निदर्शन मिलता है । वैदिक साहित्य में श्रम की लोकप्रतिष्ठा, प्रकृति के प्रति उपास्य भावना और सामूहिक कल्याण कामना वास्तव में इसी जागरण के उद्‌भव का संकेत देता है । नवजागरण के मीमांसको ने भारतीय नवजागरण के प्रथम चरण के रूप में वैदिक साहित्य को रेखांकित किया है । वैदिक साहित्य का बौद्‌धिक, सांस्कृतिक एवं भारतीय वैचारिक परम्परा में अत्यन्त विशिष्ट स्थान है क्योंकि भौतिक जगत के प्रति मनुष्य का इतना अधिक अनुराग और जीवन यथार्थ के प्रति ऐसी अनन्यनिष्ठा तत्कालीन समय के अन्य समाजों में दुर्लभ है । विचार, चिंतन और जीवन दर्शन की विशिष्ट योजना की तार्किक परिणति औपनिषदिक काल के रूप में होती है । प्राचीन काल में सभा-समितियों और गोष्ठियों में वाद-विवाद के द्‌वारा मतसमीक्षा और सिद्‌धान्त प्रतिष्ठा की जाती थी । अतः भारतीय नवजागरण का दूसरा सोपान औपनिषदिक काल को माना जाता है । औपनिषदिक काल की शास्त्रार्थ परम्परा से ही भारत में संवाद भावना की एक प्रशस्त परम्परा का निर्माण होता है । प्राचीन भारतीय दार्शनिक परम्परा का विकास इसी शास्त्रार्थ सरणी के अन्तर्गत सम्भव हो सका है । इसी कारण भारत में दार्शनिक मतों का वैविध्य देखने को मिलता है ।

विषय सूची

1. नवजागरण : अवधारणात्मक अध्ययन 2. भारतीय नवजागरण 3. नवजागरण एवं तात्कालिक परिस्थितियों का अध्ययन 4. हिन्दी नाटक का उद्‌भव और नवजागरण (19वीं शताब्दी) 5. 20वीं शताब्दी का प्रारम्भ : रंगमंच और नवजागरण (प्रसाद) 6. हिन्दी नवजागरण और स्वतंत्रतापूर्व हिन्दी रंगमंच। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

02. अग्रवाल (दीप्ति)

भारतीय डायरूपोरा : विभिन्न अनुबंधित श्रमिक देश, भारतीय संस्कृति और हिन्दी साहित्य लेखन (मॉरीशस, गयाना, त्रिनिदाद – टोबैगो, दक्षिण अफ्रिका, सूरीनाम और फ़िजी के संदर्भ मे)।

निर्देशिका : प्रो. संध्या वात्स्यायन

Th 27304

सारांश

भारतीय डायस्पोरा विश्व में सबसे बड़ा है। वे किसी भी देश में जाये अपनी संस्कृति, भाषा, संस्कार धर्म को संरक्षित करके रखना चाहते है। वे पूरी तरह से दूसरी समुदाय में नहीं घुलते मिलते हैं और अपनी नृजातीयता को बनाए रखते हैं चाहे गयाना के इंडो गयानी हो या अफ्रीका के इंडो अफ्रीकन या इंडो सरनामी या इंडो त्रिनिदाडियन ।दूसरा तथ्य यह है कि इन श्रमिकों के प्रवासन के लिए ब्रिटिश सरकार बहुत हद तक जिम्मेदार थी। उनकी नीतियों ने भारत में ऐसे हालात पैदा कर दिये थे कि भारतीयों को अपना देश छोड़ने को मजबूर होना पड़ा। इन देशों में बोली जा रही अवधी, भोजपुरी और अन्य भाषाओं के शब्दों से मिश्रित हिन्दी की विशेष शैलियाँ जैसे 'सरनामी हिन्दी'मोरिशिसियन भोजपुरी ,नैताली हिन्दी, फीजी बात गयानी हिन्दी आदि हिन्दी भाषा के विकास के नए वितान खोलती हैं। हिन्दी में इस प्रथा के आराम्भ होने के बाद से लेकर आज तक रचे जा रहे हिन्दी साहित्य के अध्ययन से उस समय और वर्तमान के इतिहास का दस्तावेजीकरण तो होता ही है साथ ही भारतीय नृजातीय पहचान में हिन्दी एक महत्त्वपूर्ण तत्व बन जाती है । प्रवासी साहित्य नई बनती हुई दुनिया का नया साहित्य है जो हिन्दी साहित्य में उदारवाद लाने विस्तार करने के साथ ही साथ नई जमीन तोड़ रहा है। 'जहाज़ी बंडल' में ले जाये गए तुलसी जामुन आम के बीजों के साथ साथ रामचरितमानस गीता कुरान संस्कृति के बीज आज फलदार वृक्ष का रूप ले चुके हैं और 'लाइफ से भरे द्वीप से लाइफ़लैस द्वीपों' के इस सफर में वहाँ रहने वाले गिरमिट आज'कुली से कुलीन' बन चुके हैं।।

विषय सूची

1. डायस्पोरा का सैद्धांतिक विश्लेषण और भारतीय डायस्पोरा 2. 'अनुबंधित श्रमिक प्रथा' अवधारणा भारतीय परिप्रेक्ष्य में 3. 'अनुबंधित श्रमिक प्रथा' से संचालित प्रमुख देशों का सामान्य परिचय (मॉरीशस, गयाना, त्रिनिदाद, दक्षिण अफ्रिका, सूरीनाम और फ़िजी) 4. अनुबंधित श्रमिक देशों में भारतीय संस्कृति की स्थापना और विस्तार 5. 'अनुबंधित श्रमिक देश' और हिन्दी की विविध शैलियॉं 6. 'प्रवासी हिन्दी साहित्य' की मूल अभिव्यंजना और अनुबंधित श्रमिक देश। उपसंहार। साक्षात्कार। परिशिष्ट। संदर्भ ग्रंथ सूची।

03. अजय कुमार

राजेन्द्र यादव के कथा साहित्य में सामाजिक यथार्थ।

निर्देशक : प्रो. रामेश्वर राय

Th 27306

सारांश

राजेन्द्र यादव शहरी मध्यवर्गीय जीवन के रचनाकार हैं । तत्कालीन समय में शहरी मध्यवर्गीय जीवन में तेज़ी से परिवर्तन हो रहे थे, जिसका यथार्थ चित्रण उन्होंने अपनी कहानियों व उपन्यासों में किया । संयुक्त परिवारों का टूटना, नैतिक मूल्यों का विघटन, आर्थिक समस्याएँ, शहर की भागती–दौड़ती ज़िन्दगी, चकाचौंध, रोटी, कपड़ा, मकान जैसी बुनियादी सुविधाएँ जुटाने के चक्र में पिसता आम आदमी, पलायन के कारण, शहर में रहने को विवश व्यक्ति का अकेलापन, संत्रास, घुटन, अजनबीपन, दोहरे चरित्र व खोखलेपन का यथार्थ चित्रण उनके कथा साहित्य में देखने को मिलता हैं । राजेन्द्र यादव ने अपने समय की सामाजिक–राजनीतिक परिस्थितियाँ व बदलते परिवेश को विविध कोणों से देखा व परखा और आज़ादी के बाद के बदलते माहौल की सच्ची तस्वीर पेश की । राजेन्द्र यादव के कथा साहित्य का एक महत्त्वपूर्ण पहलू स्त्री–पुरूष संबंधों की टूटन भी रहा है । जहाँ उनके संबंधों का टूटना ही उनकी नियति है । लेखक ने संबंधों में तनाव व टूटन के कारणों का भी विश्लेषण किया है । उनका मानना है कि जब तक प्रेम व विवाह में स्त्री–पुरूष की आपसी सहमति न हो तब तक संबंध परिपक्व व टिकाऊ नहीं बन सकता । और दूसरी जरूरी बात हमें उन सामाजिक रूढ़ियों व खोखली परंपराओं को तोड़ना होगा जो प्रेम व विवाह को निष्प्राण व उम्र कैद जैसा बना रही है । जाति–व्यवस्था और वंचित समाज की पीड़ा का यथार्थ चित्रण भी राजेन्द्र यादव ने किया । राजेन्द्र यादव वर्ण–व्यवस्था, जातिवाद के विरोधी थे क्योंकि वर्ण–व्यवस्था गैर–बराबरी पर टिकी व्यवस्था है जिसमें दलितों और पिछड़ों को बराबरी से सम्मान से जीने का अधिकार नहीं है । राजेन्द्र यादव ने सवर्ण लोगों के दलितों पर हिंसक अत्याचारों का भी तल्खी से चित्रण किया, जिसमें ऊँची जाति के व्यक्ति छोटी जाति वालों पर केवल अपना जातिगत दबदबा, श्रेष्ठता व रौब दिखाने के लिए उन्हें मारते–पीटते हैं, उनसे बेगारी करवाते हैं और चरण स्पर्श के लिए बाध्य करते हैं।

विषय सूची

1. सामाजिक यथार्थ की अवधारणा और राजेन्द्र यादव की रचनाशीलता 2. हिन्दी कथा साहित्य में व्यक्त सामाजिक यर्थाथ 3. राजेन्द्र यादव की कहानियों में सामाजिक यथार्थ संबंधी विवेचन 4. राजेन्द्र यादव के उपन्यासों में अभिव्यक्ति सामाजिक यथार्थ 5. सामाजिक यथार्थ की अभिव्यक्ति में राजेन्द्र यादव के कथा साहित्य का शिल्पगत अध्ययन। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

04. अनिरूद्ध कुमार

विनोद कुमार शुक्ल के कथा-साहित्य में प्रकृति, प्रेम और परिवार।

निर्देशिका : डॉ. कविता भाटिया/मेहता

Th 27307

सारांश

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद हिन्दी साहित्य में नयी कविता का दौर था। तत्पश्चात् सन् 1960 के बाद की कविता को साठोत्तरी कविता कहा गया। एक ओर नया उभरता हुआ समाज, उसकी नई समस्याएँ और

चिंताएँ थी तो दूसरी ओर व्यक्ति के स्तर पर मोहभंग और नाराजगी भी दिख रही थी। समकालीन रचनाकार अपने सामाजिक परिवेश का ही चित्रण नहीं करता वरन् भूत और भविष्य को भी साथ लेकर चलता है और इस अर्थ में वह युग चेतना का काव्य रचता है। हिन्दी साहित्य में समकालीन कविता का आरम्भ सन् 1960 के बाद माना जाता है। इस दौर की कविता अपने समय के सभी महत्वपूर्ण सरोकारों को उठाती हुई उसके प्रश्नों से टकराती हुई पूर्ववर्ती कविताओं से बिल्कुल भिन्न है। इस दौर के कवियों और रचनाकारों में मुक्तिबोध, धूमिल, श्रीकांत वर्मा, राजकमल चौधरी, कुमार विकल, रघुवीर सहाय आदि अपने समय और समाज की चिन्ताओं को अपनी रचनाओं में व्यक्त कर रहे थे। उन्हीं की परंपरा को आगे बढ़ाने वाले रचनाकारों में, आठवें दशक के रचनाकार विनोद कुमार शुक्ल अपनी विशिष्ट पहचान रखते हैं। उनकी रचनाएँ अपने समय और समाज की गहरी समझ से संपृक्त है। इसलिए उनका भावाबोध और विचारबोध उनके रचना शिल्प को एक नए रूपाकार में प्रस्तुत करता है। कविता हो अथवा कथा-साहित्य अपनी रचनाओं के माध्यम से उन्होंने अपने युग की पीड़ा, उसके अंतर्विरोधों और सामाजिक विडंबनाओं को बड़ी कुशलता से हमारे सम्मुख प्रस्तुत किया है। विनोद कुमार शुक्ल मूलत: कवि हैं। अपनी रचनायात्रा के आरंभिक चरण में उन्हें मुक्तिबोध और हरिशंकर परसाई जैसे रचनाकारों का सान्निध्य मिला।

विषय सूची

1. विनोद कुमार शुक्ल की साहित्यिक यात्रा और युगीन परिस्थितियाँ 2. विनोद कुमार शुक्ल के कथा साहित्य में प्रकृति 3. विनोद कुमार शुक्ल के कथा साहित्य में प्रेम का स्वरूप 4. विनोद कुमार शुक्ल के कथा साहित्य में परिवार 5. भूमण्डलीकरण के दौर में प्रकृति, प्रेम और पारिवारिक समस्याएँ एवं विनोद कुमार शुक्ल का कथा साहित्य 6. विनोद कुमार शुक्ल की कथा भाषा और शिल्प विधान उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

05. अनुप्रिया

समकालीन भारतीय साहित्य पत्रिका के संदर्भ में समकालीन हिन्दी कविता और अतीत-स्मृति (2010- 2017)।
निर्देशक : प्रो. राम प्रकाश द्विवेदी
Th 27308

सारांश

इस शोध-कार्य का शीर्षक 'समकालीन भारतीय साहित्य' पत्रिका के संदर्भ में हिंदी कविता और अतीत-स्मृति (2010-2017) है । यह शोध-कार्य साहित्य अकादमी की द्वैमासिक पत्रिका 'समकालीन भारतीय साहित्य' में प्रकाशित हिंदी कविताओं का अतीत-स्मृति की दृष्टि से अध्ययन करता है। इसका निष्पादन चार अध्यायों के माध्यम से किया गया है जो अधोलिखित हैं – प्रथम अध्याय: मानवीय संवेदना का वर्तमान परिदृश्य, द्वितीय अध्याय: सांस्कृतिक धरोहर के आलोक में समाज एवं मनुष्य, तृतीय अध्याय: आँचलिक परिवेश का बदलता स्वरूप, तथा चतुर्थ एवं अंतिम अध्याय: अस्मिता विमर्श के पृष्ठ पर स्त्री और दलित। प्रथम अध्याय महानगरीकरण, अकेलापन और निरर्थकता-बोध, तकनीकी, संचार एवं विज्ञान, तथा पारिवारिक विघटन और सम्बन्धों का अंतर्द्वंद्व तीन उपविषयों के माध्यम से आधुनिक

मनुष्य के संवेदनात्मक पहलुओं का गहराई से अवलोकन करता है। द्वितीय अध्याय सांस्कृतिक मूल्य: धारणा एवं स्वरूप, सामाजिक जीवन एवं मूल्य, बाज़ारीकरण एवं आर्थिक मूल्य, तथा दार्शनिक मूल्य एवं जीवन चार उपविषयों के माध्यम से संस्कृति की धारणा, उसके बदलते स्वरूप और उसकी सार्थकता पर विशद प्रकाश डालता है। तृतीय अध्याय आँचलिकता: परिभाषा एवं स्वरूप, गाँव की मौलिकता एवं उसका परिवर्तित स्वरूप, गाँव, शहर और विस्थापन, तथा प्रकृति एवं पर्यावरण चार उपविषयों के माध्यम से ग्रामीण परिवेश के स्वरूप, उसकी खण्डित मौलिकता और अनवरत जारी विस्थापन के साथ नए युग में उसकी स्वायत्तता को बरकरार रखने के उपायों पर गहन मंथन करता है। चतुर्थ एवं अंतिम अध्याय वर्तमान समय के दो महत्त्वपूर्ण विषयों – स्त्री और दलित पर सारगर्भित विचार-विमर्श करता है। स्त्री-विमर्श के अंतर्गत स्त्री-विमर्श का स्वरूप, पुरुषसत्तात्मक समाज और स्त्री, देह, बाज़ार और व्यापार, तथा स्त्री, प्रेम और परिवार चार उपविषयों को सम्मिलित किया गया है जिसमें स्त्री की वस्तु-स्थिति और मुक्ति के प्रश्न को वर्तमान समय में अनेक पहलुओं के हवाले से दर्शाया गया है। दलित-विमर्श के अंतर्गत दलित अस्मिता की पृष्ठभूमि, जातिगत भेदभाव का दंश, तथा प्रतिरोध एवं परिवर्तन तीन उपविषयों को सम्मिलित किया गया है जिसमें दलित वर्ग की पीड़ा और उसके मुक्ति के मार्ग को प्रशस्त करने वाले महत्त्वपूर्ण सूत्रों को उद्घाटित किया गया है।

विषय सूची

1. मानवीय संवेदना का वर्तमान परिदृश्य 2. सांस्कृतिक धरोहर के आलोक में समाज एवं मनुष्य 3. ऑचलिक परिवेश का बदलता स्वरूप 4. अस्मिता विमर्श के पृष्ठ पर स्त्री और दलित।उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

06. आर्य (रोहित)

हिंदी नवजागरण में भारतेंदुयुगीन नाटकों की भूमिका।

निर्देशिका : डॉ. राजकुमारी पाण्डेय

Th 27309

सारांश

प्रस्तुत शोध प्रबंध का विषय है हिंदी नवजागरण में भारतेंदुयुगीन नाटकों की भूमिका। शोध प्रबंध का उद्देश्य है हिंदी नवजागरण में भारतेंदुयुगीन नाटकों की भूमिका को प्रकाश में लाना। शोध प्रबंध को पाँच अध्यायों में विभाजित किया गया है। प्रथम अध्याय 'नवजागरण का अर्थ, अभिप्राय एंव चेतना' के अंतर्गत नवजागरण का अर्थ, अभिप्राय एंव चेतना को व्याख्यायित करते हुए भारतीय नवजागरण की अवधारणा और सातत्यता, यूरोपीय पुनर्जागरण और भारतीय नवजागरण में अन्तर, हिंदी नवजागरण का स्वरूप एवं अवधारणा तथा भारतेंदु और हिंदी नवजागरण को व्याख्यायित तथा विश्लेषित किया गया है। शोध प्रबंध के द्वितीय अध्याय 'भारतेंदुयुगीन पूर्व नाट्य परंपरा एवं प्रेरणा स्रोत' में भारतेंदुयुगीन पूर्व नाट्य परंपराओं का भारतेंदुयुगीन नाटकों पर पड़े प्रभावों को विश्लेषित किया गया है। शोध प्रबंध के तृतीय अध्याय 'भारतेंदुयुगीन नाट्य चेतना एंव भारत भाव' में भारतेंदुयुगीन नाट्य चेतना और उसमें व्यक्त भारत भाव को व्याख्यायित तथा विश्लेषित किया गया है। शोध प्रबंध के चतुर्थ

अध्याय 'भारतेंदुयुगीन नाट्य रूपों का शिल्प विधान' के अंतर्गत भारतेंदुयुगीन नाट्य रूपों के शिल्पगत विधान का विश्लेषण किया गया है। शोध प्रबंध के पंचम अध्याय 'भारतेंदुयुगीन अनूदित नाटक' में भारतेंदुयुगीन अनूदित नाटकों को भाषाई आधार पर विभाजित कर उनका विश्लेषण किया गया है। उपसंहार में सम्पूर्ण अध्यायों का मूल्यांकन कर उनका निष्कर्ष निकाला गया है। शोध प्रबंध का निष्कर्ष यह है कि हिंदी नवजागरण में भारतेंदुयुगीन नाटकों की महत्वपूर्ण तथा अविभाज्य भूमिका है । परिशिष्ट के अंतर्गत, आधार ग्रंथ, सहायक ग्रंथ, इतिहास ग्रंथ, शब्द कोश, शब्दावली, पत्र-पत्रिकाओं तथा अन्य माध्यमों की जानकारी दी गई है।

विषय सूची

1. नवजागरण का अर्थ, अभिप्राय एवं चेतना 2. भारतंदु पूर्व नाट्य परंपरा एवं प्रेरणा स्त्रोत 3. भारतेंदुयुगीन नाट्य चेतना एवं भारत भाव 4. भारतेदुयुगीन नाट्य रूपों का शिल्प विधान 5. भारतंदुयुगीन अनूदित नाटक । उपसंहार। परिशिष्ट संदर्भ ग्रंथ सूची।

07. एकता

रणेन्द्र के कथा-साहित्य में आदिवासी समाज।

निर्देशक : प्रो. अश्वनी कुमार

Th 27311

सारांश

आदिवासी भारत के मूल निवासी है जिन्होंने अपनी संस्कृति एवं जीवन को बचाते हुए जंगलों में आश्रय ग्रहण किया और शांतिपूर्वक अपने पूर्वजों के अनुरूप अपना जीवन व्यतीत करने लगे । किंतु आज वर्तमान समय में इनकी पहचान मिटाने की कोशिश की जा रही है। लेखक के कथा साहित्य के अध्ययन से जहां एक तरफ आदिवासियों की संस्कृति कि छटा देखने को मिलती है तो दूसरी तरफ़ लेखक अपने साहित्य में आदिवासी समाज के नग्न यथार्थ से पर्दा हटाते हुए झारखंड के आदिवासी समाज की सदियों से संजोकर रखी हुई संस्कृति के पतन को रेखांकित करता है। भूमण्डलीकरण के युग में पूँजीपति अपने व्यापार में वृद्धि तथा लाभ के लिए आदिवासी जंगलों में घुसपैठ कर वहाँ पर अपना साम्राज्य विकसित कर वहाँ के प्राकृतिक संसाधनों का दोहन करते हैं। आज पूँजीपति व उद्योगपति सफलता के लिए हर संभव प्रयास करते है। आदिवासियों के संघर्ष को समाप्त करने के लिए इनको नक्सली घोषित करके इनकी हत्या कर दी जाती है तथा इनके सम्मुख आर्थिक समस्याएँ उत्पन्न कर दी जाती हैं। वर्तमान समय में आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, एवं राजनीतिक सभी छत्रों में भी भूमण्डलीकरण का प्रभाव दिखाई देता है जिसका मुख्य उद्देश्य किसी भी समाज की अर्थव्यस्था पर अपना अधिकार स्थापित करना होता है। इसका स्पष्ट प्रभाव आदिवासी क्षेत्रों पर दिखाई देता है। आज आदिवासी क्षेत्रों पर कब्जा करने के लिये पूँजीवादी ताकतें, उद्योगपति एवं कंपनियाँ सर्वप्रथम आर्थिक दृष्टि से हमला करते है और यदि इन्हें यहाँ सफलता नहीं मिलती तो ये लोग राजनीतिक एवं सामाजिक तरीकों से दांव-पेंच खेल कर आदिवासी ज़मीनों पर अपना कब्जा करने का हर संभव प्रयास करते हैं।

विषय सूची

1. आदिवासी जीवन : तात्पर्य एवं विकास 2. रणेन्द्रव्यक्तित्व एवं कृतित्व 3. आदिवासी समाज के जीवन मूल्य 4. रणेन्द्र के उपन्यासों में चित्रित समाज, समस्याएँ एवं संघर्ष 5. रणेन्द्र की कहानियों में चित्रित समाज, समस्याएँ एवं संघर्ष 6. रणेन्द्र के कथा साहित्य का शिल्पगत वैशिष्ट्य । उपसंहार : आदिवासी जीवन के संदर्भ मे रणेन्द्र का मूल्यांकन । संदर्भ ग्रंथ सूची।

08. कहकशां

हिंदी उपन्यासों में पसमांदा मुस्लिम जीवन की अभिव्यक्ति (विशेष संदर्भ- काला जल, झीनी-झीनी बीनी चदरिया, मखड़ा क्या देखे, कुठाँव, जहरबाद, समद शेष है, बस्ती, सात आसमान)।

निर्देशक : डॉ. रामाशंकर कुशवाहा

Th 27312

सारांश

मुस्लिम समाज में जाति व्यवस्था का आधार वर्ण व्यवस्था नहीं बल्कि पेशा है। नस्ल के आधार पर यहाँ वर्ग और जातियों का उद्भव हुआ। मुस्लिम समाज में निम्न वर्ग को अजलाफ और अरजाल के नाम से संबोधित किया गया। इन्हीं दोनों वर्गों को 'पसमांदा' कहा गया। इस समाज को लेकर हिंदी उपन्यासकारों ने कई उपन्यास लिखे। जिसमें गुलशेर खां शानी और अब्दुल बिस्मिल्लाह का नाम आना ज़रूरी हो जाता है। पसमांदा समाज आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक रूप से पिछड़ा हुआ है। यह समाज आर्थिक अभाव के कारण शिक्षा जैसी मूलभूत सुविधाओं से दूर रहा है जिसके कारण यह हर क्षेत्र में पिछड़ा हुआ है। जरूरत है कि सरकार इस मेहनतकश समाज के लिए हुनर संबंधित योजनाएं लाए और इस समाज को रोजगार मुहैया करवायी जाये। जिससे यह अपनी आर्थिक स्थिति को बेहतर करें और समाज में अपने बराबरी का योगदान दे सकें।

विषय सूची

भारतीय मुस्लिम समाज 2. मुस्लिम समाज में पसमांदा की स्थिति 3. हिंदी उपन्यासों में वर्णित पसमादा जीवन की प्रमुख समस्याएं 4. पसमांदा जीवन को चित्रित करने वाले उपन्यास 5. उपन्यासों में चित्रित पसमांदा जीवन का यथार्थ। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

09. गोंड (प्रियंका)

21वीं सदी के हिंदी उपन्यासों में आदिवासी अस्तित्व का संकट एवं प्रतिरोध के स्वर (विशेष सन्दर्भ: 2000 से 2015 तक के उपन्यासों में)।

निर्देशिका : प्रो. स्नेहलता नेगी

Th 27314

सारांश

आदिवासी विमर्श आज के समय की मांग है। यह उन्हें मनुष्य के रूप में पहचानने की हिमायत करता है। इसी आवश्यकता के तहत शोधर्थिनी ने `21वीं सदी के हिंदी उपन्यासों में आदिवासी अस्तित्व का

संकट एवं प्रतिरोध के स्वर (विशेष सन्दर्भ: 2000 से 2015 तक के उपन्यासों में)` विषय पर शोध-कार्य करने का निश्चय किया है। चूँकि आदिवासी मुद्दे हमारे समाज एवं देश के सबसे ज्वलंत प्रश्नों में से एक हैं, इसलिए प्रस्तुत शोध विषय की सार्थकता स्वयं प्रमाणित हो जाती है। प्रस्तुत शोध-कार्य हेतु आदिवासी जीवन पर आधारित निम्नलिखित समकालीन उपन्यासों का आधार-ग्रंथ के रूप में पड़ताल किया गया है- बाबाराव मडावी का `आक्रोश`, महुआ माजी का `मरंगगोड़ा नीलकंठ हुआ`, राकेश कुमार सिंह का `पठार पर कोहरा`, मन मोहन पाठक का `गगन घटा घहरानी`, हरिराम मीणा का `धूणी तपे तीर`, संजीव का `जंगल जहाँ शुरू होता है`, रणेंद्र का `ग्लोबल गाँव के देवता`, विनोद कुमार का `रेड जोन`, वाल्टर भेंगरा तरुण का `लौटते हुए`, पीटर पॉल एक्का का `पलाश के फूल और सोन पहाड़ी ड़ी`, पीटर पॉल एक्का का `मौन घाटी और जंगल के गीत`, तेजिंदर का `काला पादरी` और मंगल सिंह मुंडा का 'छै छैला सन्दू`। उक्त उपन्यासों के चयन का आधार यह है कि इसमें आदिवासी समाज के अस्तित्व संकट के लिए जिम्मेदार विभिन्न कारणों, अपनी अस्मिता की पहचान, एवं अधिकारों के प्राप्ति के क्रम में उपजे प्रतिरोध की ध्वनि प्रखर रूप से अभिव्यक्त हुई है।

विषय सूची

1. आदिवासी समाज, परिभाषा एवं स्वरूप 2. 21वीं सदी के हिन्दी उपन्यासों में आदिवासी अस्तित्व संकट के विविध कारण 3. 21वीं सदी के हिन्दी उपन्यासों में आदिवासी प्रतिरोध के स्वर 4. 21वीं सदी के हिन्दी उपन्यासों में आदिवासी स्त्री 5. आदिवासी एवं गैर – आदिवासी लेखकों के उपन्यासों का तुलनात्मक अध्ययन उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

10. गौड़ (नेहा)

उत्तरमध्यकालीन साहित्य-बोध और चिंतामणि का काव्य।

निर्देशिका : प्रो. गीता शर्मा

Th 27315

सारांश

शोध ग्रंथ के अंतर्गत सर्वप्रथम मैंने पूर्व मध्यकाल और उत्तर मध्यकाल की पूर्वपीठिका पर विचार किया है । इस शोध ग्रंथ में मैंने उत्तरमध्यकालीन साहित्य, उसकी तत्कालीन परिस्थितियों और विभिन्न विचारधाराओं पर प्रकाश डाला है । तत्पश्चात् रीतिकाल के पुरोधा कवि आचार्य चिंतामणि के व्यक्तित्व, उनकी रचनाओं, उनके काव्यशास्त्रीय दृष्टिकोण, रीतिकाल के परवर्ती आचार्यों पर उनके प्रभाव, उनके मौलिक चिंतन एवं प्रदेय पर प्रकाश डाला है ।

विषय सूची

1. मध्यकालीन हिन्दी साहित्य 2. मध्यकालीन साहित्यबोध 3. चिंतामणि : का काव्यशास्त्रीय चिंतन 4. चिंतामणि का काव्यशास्त्रीय चिंतन 5. चिंतामणि के काव्य में अभिव्यक्त संस्कृति 6. उत्तर मध्यकालीन साहित्य में चिंतामणि का प्रदेय । उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

11. गौतम (श्रुति)

21वीं सदी की बाल विषयक हिंदी फिल्मों में बाल सरोकार, यथार्थ व चुनौतियाँ।

निर्देशक : डॉ. अरूण कुमार मिश्र

Th 27316

सारांश

इस शोध विषय को मैंने पाँच अध्याय में वर्गीकृत किया है। प्रथम अध्याय - 'बाल सिनेमा की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि' में सर्वप्रथम सिनेमा को परिभाषित करते हुए उसकी शुरुआती सफर का परिचय दिया है। इस अध्याय में ल्यूमियर बंधुओं द्वारा सिनेमा की शुरुआत से लेकर बाल सिनेमा के इतिहास तक को दर्शाया गया है। इस अध्याय में सिनेमा का शुरुआती दौर, बाल सिनेमा की शुरुआत, बाल सिनेमा का वैश्विक परिदृश्य तथा बाल सिनेमा का भारतीय परिदृश्य आदि मुख्य बिंदुओं पर प्रकाश डाला गया है। बाल सिनेमा आज की जरूरत है, इस बात को विभिन्न बाल फिल्मों के आधार पर पुष्ट करने की कोशिश इस अध्याय में की गई है। बाल सिनेमा की सभी ऐतिहासिक परिस्थितियों को इस अध्याय में समेटने की कोशिश की है। वैश्विक परिदृश्य में अमेरिका, जापान, सोवियत, इटली, चीन आदि अन्य देशों के बाल सिनेमा का अध्ययन किया गया है। भारतीय परिदृश्य में 21वीं सदी से पहले तथा 21वीं सदी में बन रहे बाल सिनेमा का चित्रण है। इस अध्याय में बाल सिनेमा के माध्यम से विश्व और भारतीय बाल सिनेमा की सभी परिस्थतियों का अध्ययन किया गया है । बाल सिनेमा के समक्ष समय-समय पर आने वाली चुनौतियों का भी इसमें जिक्र है। शोध प्रबंध के द्वितीय अध्याय - 'हिंदी सिनेमा में बाल विषयक फिल्मों की यात्रा' में हिंदी बाल सिनेमा की अब तक की यात्रा पर प्रकाश डाला दया है। यह अध्ययन दो भागों में बांटा गया है – पहला 21वीं सदी से पूर्व बाल सिनेमा तथा दूसरा 21वीं सदी में बाल सिनेमा। इन दोनों के माध्यम से भारतीय बाल सिनेमा की रीढ़ को समझने का प्रयास किया गया है । बाल सिनेमा की शुरुआत से लेकर अब तक की यात्रा को एक साथ देखने कि कोशिश इसमे है। तृतीय अध्याय में 'बदलते समाज में बालमन' में सिनेमा और समाज के गहरे रिश्ते कि पड़ताल की गई है। बदलते समाज का जो असर बालमन पर पड़ रहा है उसे सिनेमा दर्शाने में सक्षम हुआ है या नहीं, इस जैसे कई महत्वपूर्ण प्रश्नों का जवाब इस अध्याय के माध्यम से जानने की कोशिश रहेगी। इसमें बालक के मन का विश्लेषण किया गया है और उन कोमल मस्तिष्क पर किन-किन बातों का और कितना प्रभाव पड़ता है, इसका विस्तृत विवेचन है। चतुर्थ अध्याय 'हिंदी की प्रमुख बाल विषयक फिल्मों में बाल समस्याओं का अध्ययन' में बाल सिनेमा के अंतर्गत आयीं बच्चों से संबंधित सभी समस्याओं का अध्ययन है । बच्चों पर आधारित फिल्मों में हमेशा बच्चों से जुड़ी समस्याएं मौजूद रहती हैं। इसमें शारीरिक, मानसिक, आर्थिक इत्यादि समस्याओं पर चर्चा है। इन समस्याओं का वर्गीकरण करके हम बाल सिनेमा के अनुसार उन समस्याओं पर चर्चा है । पंचम अध्याय - 'बाल विषयक फिल्मों के समक्ष चुनौतियाँ' में बाल सिनेमा की चुनौतियों पर दृष्टि डाली है। चूंकि बाल सिनेमा भारत में अभी धीरे – धीरे लोकप्रिय होना शुरू हुआ है, ऐसी स्थिति में इससे जुड़े हर व्यक्ति को बहुत सारी चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। इस अध्याय में उन्हीं चुनौतियों पर प्रकाश डाला गया है।

विषय सूची

1. बाल सिनेमा की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि 2. हिन्दी सिनेमा में बाल विषयक फिल्मों की यात्रा 3. बदलते समाज में बालमन 4. हिन्दी की प्रमुख बाल विषयक फिल्मों में बाल सम्स्याओं का अध्ययन 5. बाल विषयक फिल्मों के समक्ष चुनौतियाँ । उपसंहार। परिशिष्ट । संदर्भ ग्रंथ सूची।

12. चौरसिया (पंकज)

स्त्री और दलित विमर्श के सन्दर्भ में शिवमूर्ति के कथा साहित्य का अध्ययन।

निर्देशक : प्रो. संजीव कुमार

Th 27318

सारांश

प्रस्तुत शोध प्रबंध शिवमूर्ति के लेखन के माध्यम से उत्तर-भारतीय ग्रामीण दलित-महिलाओं की वास्तविकता को जानने का एक सायास प्रयास है। शिवमूर्ति पूर्वी उत्तर प्रदेश के सुल्तानपुर जिले से संबंध रखते हैं। उनका लेखन-काल सुदीर्घ है लेकिन परिमाण अत्यल्प। इतने कम लेखन के बावज़ूद भी उन्होंने हिन्दी साहित्य जगत में अपनी दमदार उपस्थिति दर्ज की है। शिवमूर्ति की चर्चा करते समय परिमाण की कोई अहमियत नहीं रह जाती। उनकी एक-एक रचना को जो ख्याति प्राप्त हुई है, विश्वसनीयता हासिल हुई है, वह अन्यत्र दुष्प्राप्य और दुर्लभ है। शिवमूर्ति की रचना और कर्म क्षेत्र दोनों गाँव से संबद्ध रहा है। वे अवध क्षेत्र के गाँवों के बहाने संपूर्ण उत्तर भारतीय ग्राम जीवन के सामाजिक यथार्थ की मुकम्मल तस्वीर प्रस्तुत करते हैं। शिवमूर्ति ने गाँवों में रह रहे स्त्रियों और दलितों के त्रासद जीवन का तथा उनमें समय के परिवर्तन के साथ उत्पन्न हो रही राजनीतिक और सामाजिक चेतना का जिस सामर्थ्य और संवेदन के साथ चित्रण किया है, वह अन्यत्र दुर्लभ है। प्रस्तुत शोध प्रबंध का विषय है – "स्त्री और दलित विमर्श के संदर्भ में शिवमूर्ति के कथा साहित्य का अध्ययन।" इसे पाँच अध्यायों में विभाजित किया गया है।

विषय सूची

1. स्त्री और दलित विमर्श : उद्‌भव, विकास और समकाल 2. शिवमूर्ति के कथा साहित्य में भारतीय ग्रामीण जीवन का चित्रांकन 3. स्त्री-विमर्श के संदर्भ में शिवमूर्ति का कथा साहित्य 4. दलित-विमर्श के संदर्भ में शिवमूर्ति का कथा साहित्य 5. वेचारिक पक्षकमे समायोजन के संदर्भ में श्विमूर्ति के कथा शिल्प का अध्ययन। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

13. जोशी (साक्षी)

गंगा-यमुनापरक हिंदी साहित्य लेखन की परम्परा और उसका संवेदनात्मक विवेचन।

निर्देशक : प्रो. ममता सिंगला

Th 27319

सारांश

मेरा शोध विषय भारत की दो प्रमुख नदियों गंगा और यमुना पर केन्द्रित है जो भारत के हृदयस्थल की जीवन धरा हैं एवं भारतीय संस्कृति पहचान हैं। जिनका वर्णन, महात्म्य एवं सांस्कृतिक अवदान की गाथाएँ

प्राचीन संस्कृत वांग्मय, महाभारत, रामायण तथा अनेक पुराणों में पुण्य सलिला, पाप नाशिनी, मोक्ष प्रदायिनी, सरित श्रेष्ठा कहकर गाई गयी हैं। पंडितराज जगन्नाथ जी ने 'श्री गंगालह' नामक काव्य ग्रन्थ की रचना की जो संस्कृत साहित्य की सर्वश्रेष्ठ रचना है, जिसमें कवि ने गंगा की स्तुति की है। मध्यकालीन हिंदी साहित्यकारों के लिए यह रचना बहुत प्रेरणादायक रही है। मेरा शोध प्रबंध कुछ मुख्य रचनाकारों पर आधारित है जैसे रत्नाकर पृथ्वीराज रासो, बीसलदेव रासो, आल्हखण्ड, विद्यापति कबीर, जायसी, सूर, तुलसी, सेनापति, रसखान, रहीम, भारतेन्दु, पन्त जोइन महान नदियों के आकर्षण से बच नहीं पाया।जिनकी स्तुति के स्वर्णिम चिन्ह इनके साहित्य में एक स्थाई महत्त्व रखते हैं, जो जानते थे कि ये नदियाँ हमारी माँ हैं। इन साहित्यकारों के द्वारा इन नदियों के सांस्कृतिक महत्त्व को रेखांकित करना मेरे शोध प्रबंध के केंद्र में है। मेरा प्रयास रहा कि गंगा-यमुना नदियों पर लिखे गए अक्षुण्ण साहित्य पर एक विवेचनात्मक अनुसन्धान प्रस्तुत करूँ।उन साहित्यिक कृतियों को आधार में रखकर शोध कार्य किया गया है जो इन नदियों की गौरवगाथा, सांस्कृतिक पहचान, मिथक, जनश्रुतियों तथाकिंवदंतियों को समेटे हुए है। उन साहित्यकारों पर अनुसन्धान किया गया है, जिनके लिए यह नदियाँ इतना महत्त्व रखतीं थी कि अपने जीवन और रचनात्मकता का एक बड़ा हिस्सा उन्होंने इसे समर्पित कर दिया। इन साहित्यकारों के गंगा-यमुनापरक कृतियों के कविकर्म को समझने की कोशिश की गयी है। इनकी काव्यभूमि तथा जीवन भूमि का इन नदियों से सम्बन्ध और समाज तक वह इसकी संवेदना को कैसे पहुंचा पाए इसका समग्र मूल्यांकन किया गया है।

विषय सूची

1. भारतीय साहित्य में वर्णित गंगा–यमुनापरक अभिव्यक्तियों की साहित्यिक पृष्ठभूमि 2. गंगा–यमुनापरक हिंदी साहित्य का सर्वेक्षणात्मक अध्ययन 3. हिंदी साहित्य की गंगा–यमुनापरक प्रमुख कृतियों का अध्ययन 4. गंगा–यमुनापरक हिंदी साहित्य का धार्मिक एवं सांस्कृतिक अध्ययन 5. गंगा–यमुनापरक हिंदी साहित्य की प्रमुख कृतियों की भाषा एवं शिल्प का अध्ययन। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

14. डोगरा (हेमराज)

नई कविता के गीतों का विश्लेषणात्मक अध्ययन।

निर्देशक : प्रो. हेमंत कुकरेती

Th 27320

सारांश

प्रस्तुत पीएचडी. शोध-विषय "नई कविता के गीतों का विश्लेषणात्मक अध्ययन" की सृजनात्मक काव्य प्रकृति, अंतर्गठन, रूपगठन, काव्यभाषा, रचना प्रक्रिया के साथ साथ सामाजिक सांस्कृतिक तथा वैश्विक संदर्भों, प्रभावों इत्यादि की विस्तृत विवेचना के लिए कुल पांच अध्यायों की अवतारणा की गई है- अध्याय 1- हिंदी में गीत लेखन की काव्य परंपरा और उसका अवधारणात्मक स्वरूप। अध्याय 2- नई कविता का कव्यगत परिदृश्य। अध्याय 3- नई कविता के गीतों की रचना प्रक्रिया। अध्याय 4- नई कविता के गीतों में अभिव्यक्त जीवन-बोध। अध्याय 5- नई कविता के गीतों की अंतर्योजना और काव्य -शिल्प। इसके उपरांत इस शोध प्रबंध की सार(summary) को ` उपसंहार ` शीर्षक के अंतर्गत समाहित किया गया है और अंत में संदर्भ ग्रंथ सूची स्नलग्न कर दी गई है।

विषय सूची

1. हिंदी में गीत लेखन की काव्य परंपरा और उसका अवधारणात्मक स्वरूप 2. नई कविता का कव्यगत परिदृश्य 3. नई कविता के गीतों की रचना प्रक्रिया 4. नई कविता के गीतों में अभिव्यक्त जीवन-बोध 5. नई कविता के गीतों की अंतर्योजना और काव्य -शिल्प । उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

15. दीक्षित (दुर्गेश कुमार)
भारतीय सांस्कृतिक बोध की सातत्यता और रामविलास शर्मा का चिंतन।
निर्देशक : प्रो. चन्दन कुमार
Th 27321

सारांश

भारतीय संस्कृति के आधाररूपों एवं दार्शनिक व सामाजिक प्रस्थानबिन्दुओं के साथ साहित्यिक अन्तर्सम्बद्धता के आधार पर रामविलास शर्मा की वैचारिक एवं चिंतनपरक रचनाधर्मिता के अनुशीलन पर आधृत इस शोध कार्य के दौरान मैंने भारतीय वाङ्गय के आदिरूपों तथा उनकी उद्भावक स्थितियों पर विचार करते हुए भारतीय सांस्कृतिक बोध के विनिर्माण एवं उसकी विकासपरक अवस्थाओं का अनुशीलन करते हुए भारतीय साहित्य से इसकी वैचारिक अन्तर्सम्बद्धता को व्याख्यापित करने का कार्य किया है। अर्वाचीन साहित्य से भारतीय संस्कृति के अन्तर्सम्बन्धों पर विचार करते हुए साहित्य के विभिन्न रूपों के मध्य इसकी भविष्यधर्मी महत्वशीलता की रेखांकित करने का प्रयास किया है। इस शोध कार्य के अन्तर्गत रामविलास शर्मा की आलोचकीय स्थापनाओं तथा उनके उत्तरकालिक सांस्कृतिक चिंतन एवं उनकी भारतीय विचार दृष्टि को नवीन सन्दर्भों में परिभाषित किया गया है। स्वातंत्र्योत्तर वैमर्षिक साहित्य चिंतन तथा विखण्डनवादी साहित्य परम्परा के मध्य रामविलास शर्मा का साहित्यिक चिंतन, अपने सांस्कृतिक जीवन दर्शन के माध्यम से सामाजिक संयोजकता की प्रतिष्ठा करता है- इस तथ्य को महत्वपूर्ण रूप में स्थापित किया गया है। आज के समय में साहित्य की विग्रहणीय धाराओं को रामविलास शर्मा के वैचारिक दर्शन के द्वारा पुनः उसकी सांस्कृतिक परंपरा से संयोजित करने की आवश्यकता है। इसी कारण उनकी वैचारिक निष्पत्तियों को वर्तमान समय के संदर्भ में साहित्य के रचनात्मक एवं मूल्यांकनधर्मी मानदंडों के निर्माण में उपयोगी बनाना चाहिए। उनके विचार दर्शन को वामपंथी विचारधाराओं ने निरंतर हेय दृष्टि से देखने का कार्य किया क्योंकि भारतीयता के विचार के साथ साम्यता रखने वाले किसी भी वैचारिक दर्शन को भारत का वामपंथी समाज कभी स्वीकृत नहीं कर सकता। हिंदी के मूर्धन्य आलोचक ने उनको इतिहास का शव साधक सिद्ध करने का विफल प्रयत्न किया। ऐसे आलोचकों के द्वारा निर्धारित किए गए रचनात्मक मानदंड किस तरह साहित्य को दिशा दृष्टि प्रदान करने में विफल सिद्ध हो चुके हैं। आज के समय में रामविलास शर्मा द्वारा बनाए गए रचनात्मक मूल्यांकन सूत्रों के आधार पर एक ऐसी रचना दृष्टि का निर्माण किया जा सकता है जो साहित्य की वर्तमान ही नहीं बल्कि भविष्य की भी दिशा दृष्टि का निर्धारण कर सकती है। इस दिशा में प्रस्तुत शोध प्रबंध कुछ नवीन विचार दृष्टि प्रदान करेगा, ऐसी आशा है।

विषय सूची

1. भारतीय सांस्कृतिक चिंतन परम्परा का स्वरूप 2. भारतीय संस्कृति के विविध आयाम और तत्सन्दर्भित विभिन्न ज्ञानानुशासन 3. भारतीय सांस्कृतिक चिंतनतत्व और रामविलास शर्मा का साहित्य 4. रामविलास शर्मा के समग्र चिंतन में निहित भारतीय संस्कृति का समाजकेंद्रीत स्वरूप 5. भारतीय संस्कृति का साहित्यिक परिप्रेक्ष्य व रामविलास शर्मा। उपसंहार। परिशिष्ट। संदर्भ ग्रंथ सूची।

16. देवेश

इक्कीसवीं शताब्दी के हिंदी उपन्यासों में मानव की निर्मिति का अध्ययन।

निर्देशिका : डॉ. आशा

Th 27322

सारांश

भारत में बीसवीं सदी के आर्थिक सुधार के बाद से आर्थिक परिवर्तनों की श्रृंखला देखी जा सकती है जिसने राजनैतिक एवं सामाजिक परिवर्तनों को प्रभावित किया। मानव समाज की मूल इकाई है। जिसके ऊपर समाज के हर परिवर्तन का असर अनिवार्य रूप से पड़ता है। इन परिवर्तनों से मनुष्य की निर्मिति भी प्रभावित होती है। मानव की निर्मिति की प्रक्रिया को समझते हुए इक्कीसवीं शताब्दी के मानव की निर्मिति को समझना इस शोध का प्रमुख उद्देश्य है। जिसके लिए इक्कीसवीं सदी में प्रकाशित बीस उपन्यासों को आधार ग्रंथों के रूप में प्रयोग में लाया गया है। बीसवीं शताब्दी का उत्तरार्ध इक्कीसवीं सदी के स्वरूप निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता दिखाई देता है। इसमें विशेष रूप से दो घटनाओं को देखा जा सकता है स्वतंत्रता प्राप्ति एवं भारत में आर्थिक सुधारों को लागू किया जाना। इन दोनों को कल विभाजन तथा भविष्य की भूमिका के रूप में शोध में प्रयोग किया गया है। इसी संदर्भ में भूमंडलीकरण, नवउदारवाद एवं आधुनिकता का भी अध्ययन किया गया है। इसके बाद जेंडर की भूमिकाओं, उम्र विशेष के आधार पर होने वाले अनुभव एवं प्रौद्योगिकी से बनने वाले संबंध के आधार पर मानव की निर्मिति पर विचार किया गया है। तदोपरांत उपन्यासों में दृष्टिगत होने वाले मानव और वह समाज जिसमें वह रहता है के बीच होने वाली अंतर्क्रियाओं के माध्यम से उपन्यासों में निर्मित होने वाले मानव की निर्मिति को विश्लेषित किया गया है।

विषय सूची

1. इक्कीसवीं सदी : पृष्ठभूमि, परिस्थितियाँ एवं अवधारणाएं 2. उपन्यास चयन के आधार एवं चयनित उपन्यासों का परिचय 3.मानव और उसके विभिन्न आयाम 4. इक्कीसवीं सदी : हिन्दी उपन्यासों में मानव की निर्मिति 5. उपलब्धि। संदर्भ ग्रंथ सूची।

17. नायक (अंजना)

महादेवी वर्मा के गद्य साहित्य में कथ्य एवं शिल्प।

निर्देशक : प्रो. अपूर्वानंद

Th 27324

सारांश

महादेवी वर्मा का व्यक्तित्व अपने जीवन पर्यंत तक आकर्षक रहा|उन्होंने आजीवन कला और साहित्य की उपासना की|महादेवी जी के भाव जगत् में पीड़ा है तथा बुद्धि जगत में यथार्थ जीवन की समिपता के दर्शन हैं|काव्य में आत्मपरक, कल्पनापरक, महादेवी गद्य क्षेत्र में आकर बहिर्मुखी हो गई हैं|महादेवी जी सफल कवयित्री, आलोचिका उत्कृष्ट रेखाचित्र एवं संस्मरण लेखिका के साथ एक सफल निबंधकार भी रही हैं| महादेवी वर्मा की गद्य साहित्य का कथ्य और शिल्प आकर्षक रहा है|उन्होंने कथ्य के साथ-साथ शिल्प को भी अलंकार से परिपूर्ण बनाया है| जिस प्रकार साहित्य-सृजन इनके स्वभाव का अंग है,उसी प्रकार चित्रांकन भी|रेखाचित्र और संस्मरण में पात्रों का करुणाजनक चित्रण पाठक को आकर्षित करते हैं| महादेवी जी बुद्ध की करुणा से प्रभावित कवि-हृदया नारी दूसरों को पीड़ा नहीं पहुंचती बल्कि दूसरों के दुख दूर करने का प्रयत्न करती हैं| नारी संबंधित प्रश्न, नारी के संपूर्ण दुख का निवारण| चीनी वस्त्र विक्रेता का आवश्यकता न होने पर भी पूरा बकूचा खरीदना| झूसी अरैल में घूमते हुए बच्चों को शिक्षा प्रदान करना| विधवा प्रसूता के लांछन और धनाभाव को समेटते हुए कहीं किसी दुर्भाग्य एवं समाज-पीड़िता नारी के जीवन में व्याप्त करुणा को एकत्रित करती दिखाई देती हैं|

विषय सूची

1. महादेवी वर्मा के गद्य साहित्य में सामाजिक युग – बोध का काव्य 2. संस्मरण और रेखाचित्र में उपेक्षित व्यक्तियों एवं पशु पक्षियों का काव्य 3. गद्यकार महादेवी वर्मा के स्त्रीवादी पाठ का कथ्य 4. महादेवी वर्मा के निबंधो में समन्वयसवादी दृष्टिकोण 5. महादेवी वर्मा के गद्य साहित्य का शिल्प पक्ष । उपसंहार। संदर्भ ग्रंथसूची।

18. प्रशांत रमन रवि

सन्त बसवेश्वर और कबीर का काव्य: एक सांस्कृतिक अनुशीलन।

निर्देशक : डॉ. राम प्रकाश द्विवेदी

Th 27887

सारांश

कबीर और बसव के काव्य का तुलनात्मक अध्ययन भारतीय साहित्य में महत्वपूर्ण स्थान रखता है। दोनों कवियों ने समाज में व्याप्त भेदभाव, अंधविश्वास और कर्मकांडों के खिलाफ आवाज उठाई। उनके विचारों में एक गहरी आत्मीयता और सामाजिक चेतना निहित है। कबीर, जिन्हें संत कवि माना जाता है, ने अपने पदों में भगवान के प्रति प्रेम और सच्चाई का संदेश दिया। उनके काव्य में लोकभाषा का उपयोग किया गया, जिससे उन्होंने जनसामान्य को संबोधित किया। कबीर का संदेश सरल और स्पष्ट था; वे भक्ति और ज्ञान के माध्यम से आत्मा के परमात्मा से मिलन की बात करते हैं। वहीं, बसव ने लिंगायत परंपरा को विकसित किया। उनका काव्य अद्वितीय था, जिसमें ज्ञान और भक्ति का संगम देखने को मिलता है। बसव के पदों में सामाजिक न्याय और समानता का स्पष्ट संकेत मिलता है। वे धर्म को व्यक्तिगत अनुभव के रूप में देखते थे, न कि केवल रीति-रिवाजों का पालन। दोनों कवियों के

काव्य में प्रेम, आत्मज्ञान और सत्य की खोज का संदेश है। कबीर ने अधिकतर तात्त्विक और रहस्यात्मक दृष्टिकोण अपनाया, जबकि बसव ने सामाजिक और राजनीतिक संदर्भों को भी ध्यान में रखा। अंततः, कबीर और बसव के काव्य में यद्यपि भिन्नताएं हैं, लेकिन दोनों का उद्देश्य समाज में जागरूकता लाना और मानवता की सेवा करना था। उनका काव्य आज भी हमें विचारशीलता और आत्ममंथन के लिए प्रेरित करता है। उनके विचारों में न केवल आध्यात्मिकता है, बल्कि समाज सुधार की गहरी भावना भी विद्यमान है।

विषय सूची

1. भक्तिकाव्य की परम्परा : स्त्रोत, स्वरूप एवं प्रभाव 2. भक्ति आंदोलन का अखिल भारतीय स्वरूप : धर्म, संस्कृति एवं आध्यात्मिक संदर्भ 3. संत बसवेश्वर का जीवन – परिचय एवं उनकी कविताओं का सांज्ञकृतिक अनुशीलन 4. कबीर का जीवन – परिचय एवं उनकी कविताओं का सांस्कृतिक अनुशीलन 5. बसरेश्वर एवं कबीर के काव्य का तुलनात्मक अध्ययन । उपसंहार। सन्दर्भ ग्रंथ सूची।

19. पाठक (कल्पना)

हिंदी और असमिया भाषा की व्याकरणिक कोटियों का तुलनात्मक अध्ययन।

निर्देशिका : प्रो. वीणा गॉधी

Th 27325

सारांश

मानव जीवन की एक महत्त्वपूर्ण उपलब्धि है- भाषा का ज्ञानार्जन या भाषा पर अधिकार प्राप्त करना। भाषा पर अधिकार प्राप्त करने के लिए आदमी को उस निर्दिष्ट भाषा के व्याकरण के ज्ञान की आवश्यकता पड़ेगी। किसी भी भाषा के व्याकरण के बारे में विस्तृत जानकारी प्राप्त करने के लिए उस भाषा के व्याकरण के मूल तत्वों के बारे में जानना आवश्यक है, जिसे हम व्याकरणिक कोटियाँ कहते हैं। व्याकरणिक कोटियों के अंतर्गत आते हैं- लिंग, वचन, कारक, पुरुष, काल, पक्ष, वृत्ति एवं वाच्य। हिंदी और असमिया दोनों भाषाओं की इन व्याकरणिक कोटियों के तुलनात्मक विश्लेषण को देखा जाय तो हम कह सकते हैं कि उन सबके बीच कई समानता-असमानता उभरकर सामने आती हैं। फलस्वरूप इसके अध्येता व्याकरणिक कोटियों से उत्पन्न समस्या को पहचानेंगे तथा उनका समाधान करने की कोशिश करेंगे। साथ ही इस विषय के ज्ञान द्वारा साहित्यानुवाद के स्वरुप में निश्चितता आएगी। इस शोध कार्य में किए गए अध्याय तथा उसमें वर्णित विषयों का विवरण निम्न प्रकार हैं- प्रथम अध्याय में भाषाविज्ञान और तुलनात्मक अध्ययन का सैद्धांतिक परिचय, दोनों की प्रासंगिकता एवं सामर्थ और सीमा पर बातचीत की गई है। द्वितीय अध्याय में हिंदी और असमिया भाषा का ऐतिहासिक और संरचनात्मक परिचय का वर्णन किया गया है। इसके अंतर्गत हिंदी और असमिया भाषा के उद्भव और व्याकरणिक परंपरा तथा दोनों भाषा की संरचनाओं की एक आलोकपात तैयार किया गया है। तृतीय अध्याय के अंतर्गत हिंदी और असमिया भाषा की व्याकरणिक कोटियों का सम्यक अध्ययन किया गया है। जिसमें लिंग, वचन, कारक, पुरुष, काल, पक्ष, वृत्ति एवं वाच्य आदि का विवेचन किया गया है। चतुर्थ अध्याय में हिंदी और असमिया भाषा में लिंग, वचन, कारक एवं पुरुष का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है। पंचम अध्याय में हिंदी और असमिया

भाषा में काल, पक्ष, वृत्ति एवं वाच्य का तुलनात्मक अध्ययन को दिखाया गया है। इसप्रकार इस शोध-कार्य में हिंदी और असमिया भाषा की व्याकरणिक कोटियों की तुलनात्मकता को अपेक्षित विस्तार दिया गया है। जिसमें दोनों भाषा की व्याकरणिक कोटियों के सम-विषम को पूरी प्रमाणिकता और ठोस-व्यावहारिक उदाहरणों के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है। इस शोधात्मक प्राप्ति से दोनों भाषा के अध्येताओं को व्यावहारिक तौर पर व्याकरणिक सटीकता बरतने में आसानी होगी। अनुवाद और तुलनात्मक अध्ययन के क्षेत्र में भी यह कार्य अपनी भूमिका सुनिश्चित करेगा।

विषय सूची

1. भाषाविज्ञान और तुलनात्मक अध्ययन 2. हिन्दी और असमिया भाषा का ऐतिहासिक और संकरचनात्मक परिचय 3. हिन्दी और असमिया भाषा की व्याकरणिक कोटियों का सम्यक अध्ययन 4. हिन्दी और असमिया भाषा में लिंग, वचन, कारक एवं पुरूष का तुलनात्मक अध्ययन 5. हिन्दी और असमिया भाषा में काल, पक्ष वृत्तिएवं वाच्य का तुलनात्मक अध्ययन। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथसूची।

20. पाण्डेय (अमित)

21वीं शताब्दी की हिंदी कविता में अभिव्यक्त पर्यावरण की समस्या।

निर्देशक : प्रो. संजय कुमार

Th 27326

सारांश

पिछली दो सदियों में पर्यावरण में अभूतपूर्व परिवर्तन हुआ है | इस परिवर्तन का असर इतना अधिक है कि 'पर्यावरण चिंतन' एक वैश्विक विमर्श बन गया है | पर्यावरण चिंतन की गंभीरता का अंदाजा इस तथ्य से लगाया जा सकता है कि संयुक्त राष्ट्र जिन 18 वैश्विक समस्याओं का उल्लेख करता है, उनमें से तीन (जलवायु परिवर्तन, महासागर और समुद्रों के नियम तथा जल) पर्यावरण से संबंधित हैं | पर्यावरण जैसी गंभीर समस्या की पड़ताल और उससे मुक्ति पाने का मार्ग 21 वीं शताब्दी की हिंदी कविता के भीतर प्रदर्शित किया गया है परन्तु अभी तक इस क्षेत्र में व्यवस्थित लेखन का अभाव है | एक व्यवस्थित शोध ही 21 वीं शताब्दी की हिंदी कविता के पर्यावरण चिंतन को उजागर कर सकता है | उपर्युक्त सभी बिंदुओं को ध्यान में रखते हुए प्रस्तुत शोध लिखा गया है|

विषय सूची

1. पर्यावरण की अवधारणा एवं प्रदूषण 2. भूमंडलीकरण और पर्यावरण की समस्या 3. 21वीं शताब्दी की हिन्दी कविता में प्रकृति 4. 21वीं शताब्दी की हिन्दी कविता में पर्यावरण 5. 21वीं शताब्दी की पर्यावरण सम्बन्धी हिन्दी कविता में सत्ता व्यवस्था के विरूद्ध प्रतिरोध की चेतना। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथसूची।

21. भव्या कुमारी

लोक साहित्य और शिष्ट साहित्य में स्त्री-अभिव्यक्ति का अध्ययन, विशेषकर भोजपुरी लोकगीतों और हिंदी स्त्री कविता के सन्दर्भ में ।

निर्देशिका : प्रो. सुधा उपाध्याय

Th 27329

सारांश

आधुनिकता और स्त्री-विमर्श के उदय और विकास ने स्त्रियों के स्वर को परिवर्तित किया है। मध्यकालीन बोध से ग्रस्त स्त्रियाँ जहाँ पुरुषसत्तात्मक पारिवारिक-सामाजिक ढाँचे के प्रति समर्पण भाव से झुकी रहती थीं, वहीं वर्तमान की स्त्री अपने अधिकारों के प्रति सजग है, उससे जुड़े प्रश्न पूछती है और अपने अधिकारों को पाने के लिए संघर्ष करती है। इस बात को ध्यान में रखते हुए प्रस्तुत शोधकार्य की परिकल्पना की गई थी और साहित्य के क्षेत्र में भोजपुरी लोकगीतों और हिंदी स्त्री-कविता में स्त्री-अभिव्यक्ति का अध्ययन करने का लक्ष्य रखा गया था। स्त्री-अस्मिता के परिप्रेक्ष्य में उठाये गये मुद्दों में स्त्री की देह-मुक्ति का प्रश्न, स्वतंत्रता का प्रश्न, आत्मनिर्भरता की समस्या और सशक्तीकरण की बात प्रमुख है। लोकगीतों में स्त्री ने अपनी वेदनागाथा को काफी मुखर होकर उदघाटित किया है। इन गीतों में हम देखते हैं कि समाज में स्त्री की दशा बहुत शोचनीय रही है। वह आत्मनिर्भर होने की जगह पराश्रित रही है। स्त्री कविता भारतीय समाज व्यवस्था में नारी की दयनीय स्थिति को प्रकट करती है। कई कविताएँ स्त्री के प्रति पुरुषों की मानसिकता को अनावृत्त करती हैं। जिस मानसिकता के तहत पुरुषों ने स्त्रियों की प्रतिभा को सदैव अस्वीकृत किया और उसे एक देह ही माना। स्त्री कविता में इसका प्रतिरोध किया गया है। समकालीन स्त्री कविता पुरुषों से भयभीत होने वाली, अपने लाभ हेतु उनसे समझौता करने वाली स्त्रियों को अस्वीकार करती है। यह स्त्री वह नहीं जो पुरुष सत्ता को नियति मानकर स्वीकार कर लेती है बल्कि यह वह स्त्री है जो अपनी आत्मनिर्भरता एवं आत्मसम्मान का ध्यान रखती है। पुरुषसत्तात्मक व्यवस्था के प्रति विद्रोह प्रकट करती है। वह शास्त्रवाद एवं संस्कारों से सीधा टक्कर लेती है। अपनी अस्मिता को पूर्णता के साथ अपनाने की मांग करती है, जिससे पुरुष वर्चस्ववादी दृष्टि यह देखें कि स्त्री उनसे किसी भी स्तर पर कम नहीं है।

विषय सूची

1. स्त्री विमर्श : पृष्ठभूमि, अवधारणा एवं बुनियादी प्रश्न 2. लोक साहित्य का परिचय और संक्षिप्त परंपरा 3. लोकगीतों में स्त्री – संवेदना की अभिव्यक्ति 4. स्त्री अस्मिता एवं काव्य संवेदना के विभिन्न धरातल। उपसंहार। आधर एवं संदर्भ ग्रंथ सूची।

22. भारद्वाज (अदिति)

उत्तर-औपनिवेशिक विमर्श एवं विभाजन-साहित्य (हिंदी और अंग्रेजी के उपन्यासों की सृजनात्मकता के विविध सन्दर्भ) ।

निर्देशक : प्रो. संजीव कुमार

Th 27330

सारांश

विभाजन साहित्य, उत्तर–औपनिवेशिक परिदृश्य की कुछ प्रमुख सांस्कृतिक–साहित्यिक उपलब्धियों में से एक है। कारण यह कि यह साहित्य, इतिहास के इस निर्णय पर प्रश्न उठाता है जिसका आधार औपनिवेशिकता रही है । यह उस औपनिवेशिकता विरासत का एक विशिष्ट अर्थ में वह प्रतिपक्ष निर्मित करता है जो संभवतः राजनीति व स्वयं इतिहास नहीं रच सका। विभाजन साहित्य इसलिए प्रतिरोध का साहित्य है । और यह प्रतिरोध , यह आलोचना ही कहीं-न-कहीं विभाजन – साहित्य को एक प्रमुख उत्तर औपनिवेशिक पाठ बनाता है, जो विचार और क्रिया, दोनों ही के स्तर पर विभाजन को एक सबाल्टर्न दृष्टि देखता है । यह शोध इसलिए इसी प्रकक्ल्पना को आधार बना कर यह खोज करना चाहता है कि क्या विभाजन साहित्य , उत्तर– औपनिवेशिक साहित्य की एक प्रमुख धारा का निर्माण का सकता है जो साहित्य विशेषकर हिन्दी साहित्य में उत्तर–औपनिवेशिकता को न केवल प्रतिस्थापित कर सके, बल्कि इस साहित्य को उत्तर – औपनिवेशिकता के वैश्विक विमर्श से भी जोड़ सके। इस शोध की दृष्टि इस प्रश्न पर भी केंद्रित रही है कि विभाजन से उत्पन्न हुए इन दो राष्ट्रों ने किस प्रकार औपनिवेशिक इतिहास से अलग अपनी पहचान बनानी शुरू की। क्या यह पूरी यात्रा, अन्य औपनिवेशिक राष्ट्रों की विकास यात्रा से मेल खाती है। नवनिर्मित भारत और पाकिस्तान किस प्रकार विभाजन से उत्पन्न हुई समस्याओं जैसे शरणार्थियों के आवागमन, पुनर्वास, अपहृत स्त्रियों की बरामदगी और सांप्रदायिक उभारों, से जुझते हुए नये राष्ट्र की नींव रखते हैं।यह शोध, विभाजन का का इतिहास प्रस्तुत करने का दावा नहीं करता, क्योंकि यहां पर ऐतिहासिक प्रविधि जैसे तथ्यों और आंकड़ों, दस्तावेजों का प्रयोग करते हुए एक नये historiography का प्रस्ताव नहीं है। इसके विपरीत यह शोध साहित्य के माध्यम से सामाजिक-सांस्कृतिक अध्ययन करता हुआ विभाजन की समीक्षा है।

विषय सूची

1. विभाजन और साहित्य : इतिहास का निर्माण और विखंडन 2. उत्तर - औपनिवेशिक विमर्श और विभाजन - साहित्य 3. 1950 और 1960 के उपन्यास : ऐतिहासिक 'दरार' का क्षण 4. झूठा सच (1958/1960) 4. 1970 के बाद के उपन्यास : स्मृतियों की समीक्षा का प्रश्न 5. विभाजन-साहित्य : एक उत्तर-औपनिवेशिक पाठ। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

23. मिश्र (आदर्श कुमार)

केदारनाथ सिंह के काव्य में `लोक-चेतना` की अभिव्यक्ति।

निर्देशक : डॉ. सत्य प्रकाश सिंह

Th 27332

सारांश

मेरे शोध कार्य का विषय 'केदारनाथ सिंह के काव्य में लोक चेतना की अभिव्यक्ति' है। शोध कार्य विषय के प्रति एक नवीन दृष्टि तो बनाता ही है साथ ही विषय को प्रमाणिक तथा सर्वग्राह्य बनाता है। ज्ञान के क्षेत्र में शोध कार्य की प्रक्रिया अनवरत चलती रहती है जिससे मनुष्य तथा समाज दोनों ही समृद्ध होते

हैं। शोधकार्य में पुराने तथ्यों पर भी नये ढंग से विचार किया जाता है तथा उसकी तर्क सम्मत व्याख्या प्रस्तुत की जाती है। केदारनाथ सिंह के काव्य पर पूर्व में शोध कार्य हुए हैं किन्तु उनकी कविताओं में लोक चेतना की अभिव्यक्ति विषय पर मेरा शोध कार्य नवीन एवं मौलिक है। केदारनाथ सिंह समकालीन हिन्दी कविता के सबसे चर्चित नामों में से एक नाम रहे हैं। उनकी काव्य यात्रा की शुरुआत अज्ञेय द्वारा सम्पादित पत्रिका 'तार- सप्तक' के तीसरे अंक से हुई थी। काव्य लेखन के शुरुआती दिनों से ही इनकी कविताओं तथा गीतों में लोक जीवन की अभिव्यक्ति स्पष्ट तौर पर देखी जा सकती है।

विषय सूची

1. लोक की अवधाणा 2. लोक जीवन और केदारनाथ सिंह की कविता 3. आधुनिक समय में लोक जीवन की चुनौतियॉं और केदारनाथ सिंह की कविता 4. केदारनाथ सिंह के काव्य में प्यावरण और लोक का अन्तर्सम्बन्ध 5. समकालीन हिन्दी कविता और केदारनाथ सिंह का काव्य शिल्प और भाषा। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

24. मिश्रा (प्रीति)

माखनलाल चतुर्वेदी के काव्य में राष्ट्रीय-सांस्कृतिक चेतना।

निर्देशक : डॉ. शिव कुमार

Th 27334

सारांश

हिन्दी साहित्य के इतिहास में राष्ट्रीय चेतना का उदय भारतेंदु हरिश्चंद्र के अवतरण काल से ही माना जा सकता है, जिसमें बोए गए राष्ट्रीय जागरण के बीज ही आगे चलकर आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के युग में पल्लवित और विकसित हुए। इस युग के कवियों पर महात्मा गाँधी और उनके द्वारा चलाए गये आन्दोलन का तथा महावीर प्रसाद द्विवेदी जी के काव्य का व्यापक प्रभाव रहा। इनमें मैथिलीशरण गुप्त, गयाप्रसाद शुक्ल सनेही, सियारामशरण गुप्त, रूपनारायण पाण्डेय आदि महत्त्वपूर्ण कवि हैं। कवि माखनलाल जी के काव्य का विस्तार भी द्विवेदी युग से है, तथापि कथ्य और शिल्प की दृष्टि से वे महावीरप्रसाद द्विवेदी जी के मण्डल के प्रभाव से पृथक दिखाई देते हैं। रामखिलावन तिवारी जी ने उन्हें प्रमुख स्वदेश-प्रेमी कवि कहा है। इन सबमें माखनलाल चतुर्वेदी जी के कृतित्व का व्यक्तित्व ही स्वतंत्र प्रतीत होता है। राष्ट्र, राष्ट्रीयता और सांस्कृतिक चेतना की पवित्र संकल्पना बहुत प्राचीन है, परन्तु आधुनिक युग में यह संकल्पना एक नए, विस्तृत और उदात्त अर्थ में सम्मुख आती है। आधुनिक विस्तृत राष्ट्रीयता उदात्त अन्तर्राष्ट्रीय चेतना के रूप में विश्व-बन्धुता और मानवता का स्वर बनकर भारतीय साहित्य में प्रस्फुटित और स्पन्दित हुई है। माखनलाल चतुर्वेदी जी की काव्यवाणी राष्ट्र की चेतनाशक्ति है, जिससे राष्ट्रीय सांस्कृतिक चेतना को स्पंदित करने वाली 'वेदवाणी' कहा जा सकता है। हिन्दी में राष्ट्रीय-सांस्कृतिक भावना का आंदोलनों की पृष्ठभूमि में, यदि किसी कवि ने चित्रण किया है तो चतुर्वेदी जी ही उनमें सर्वप्रथम कहे जा सकते हैं। यहाँ आश्चर्य की बात यह है कि इनके राष्ट्र-प्रेम की भावना विद्रोह की सीमा तक पहुँची, किन्तु इन्होंने अपने हृदय की सरस एवं कोमल भावनाओं को उस विद्रोह में विलीन नहीं होने दिया।

विषय सूची

1. राष्ट्रीयता तथा सांस्कृतिक चेतना 2. आधुनिक हिन्दी कविता में राष्ट्रीय-सांस्कृतिक धारा 38-88 3. माखनलाल चतुर्वेदी का कृतित्व 4. माखनलाल चतुर्वेदी के काव्य में राष्ट्रीय चेतना के तत्व 5. माखनलाल चतुर्वेदी के काव्य में राष्ट्रीय चेतना के तत्व 6. माखनलाल चतुर्वेदी के काव्य में सांस्कृतिक चेतना के तत्व उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

25. मिश्रा (प्रियंका)

सूरदास और तुलसीदास के काव्य में चित्रित प्रकृति का तुलनात्मक अध्ययन।

निर्देशिका : प्रो. नीलम राठी

Th 27333

सारांश

भक्तिकाल हिंदी साहित्य का स्वर्ण युग के नाम से विख्यात है। इस काल के अनेक कवियों में सूरदास एवं तुलसीदास का नाम सर्वविदित है। एक कृष्ण भक्ति शाखा के प्रतिनिधि कवि है दूसरे रामभक्ति शाखा के। सूरदास ने अपने आराध्य कृष्ण से संबंधित ब्रज संस्कृति वहाँ के लोक का वर्णन किया है तो गोस्वामी तुलसीदास लोकमानस के प्रति उतने ही प्रिय है। सूरदास का रचना सोद्देश्य नहीं था क्योंकि वे कृष्ण का 'कीर्तन भजन' किया करते है। इन दोनों कवियों की रचना सोदेश्य है, वे अपनी साधना में भक्त थे। इनके काव्य में प्रकृति भावों के आवेश में ही आयी है क्योंकि दोनों कवियों का मुख्य उद्देश्य अपने आराध्य की भक्ति तथा भक्ति की मूल के रूप में प्रतिष्ठाना। सूरदास का काव्य-सूरसागर तो तुलसीदास का काव्य-विषय रामचरित मानस, गीतांवली कवितावली, विनय पत्रिका, बैरवै रामायण, वैराग्य संदीपनी, जानकी मंगल पार्वती मंगल आदि है। इन्होंने काव्य में समाज और प्रकृति को अभिव्यक्त किया है। चाहे कृष्ण का बाल-स्वरूप से लेकर, गौचरण, राम लीला से मथुरा मगन तक तो वहीं दशरथी राम अपने प्रसाद से निकलकर गुरु के आश्रम में जाते हैं अनेक प्रकार के विधानों का अभ्यास करते है, उस समय उनका समन्वय और घनिष्ठता प्रकृति के साथ होती है। दोनों कवियों के काव्यों के भीतर प्रकृति का अनुपम महत्व है, प्रकृति मनुष्य को शक्ति देती है उसको उत्साहित करती है और उसका समय-समय पर मार्गदर्शन भी करती है। मानवावतार राम कृष्ण का प्रकृति के साथ लगभग वैसा ही संपर्क है जैसा कि वैदिक ऋषियों का हुआ करता था, प्रकृति उनके लिए ईश्वर का स्वरूप है, शक्तिप्रदायिनी देव है तथा सुख-दुःख का अनन्य सहचरी है। दोनों कवियों ने अपने सभी काव्यों में विषय का विस्तार सहज रूप से किया है परन्तु इन दोनों कवियों के काव्य में प्रकृति का प्रयोग प्रचुर मात्रा में हुआ।

विषय सूची

तुलनात्मक अध्ययन का स्वरूप एवं विश्लेषण 2. प्रकृति चित्रण : अर्थ स्वरूप और आयाम 3. हिन्दी कविता में प्रकृति चित्रण का उद्भव और विकास 4. सूरदास के काव्य में चित्रित प्रकृति का स्वरूप 5.

तुलसीदास के काव्य में चित्रित प्रकृति का स्वरूप 6. सूरदास एवं तुलसीदास के चित्रण का तुलनात्मक स्वरूप। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

26. मीना (हुलासी राम)

प्रभा खेतान के उपन्यासों का सामाजिक मूल्यांकन।

निर्देशक : प्रो. केदारनाथ मीना

Th 27335

सारांश

हिंदी साहित्य की नारीवादी लेखिकाओं में प्रभा खेतान का नाम अग्रणी है। मेरे शोध विषय के अनुरूप उनके उपन्यासों में स्त्री मुक्ति से जुड़े सवालों एवं समाधानों का तटस्थता और आलोचनात्मक दृष्टि से मूल्यांकन करने का प्रयास किया है। उनके नारीवादी विचारों का सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक संदर्भ में मूल्यांकन किया है। उनकी स्त्रीवादी दृष्टि को वर्तमान सामाजिक यथार्थ एवं भविष्य की संभावनाओं से जोड़ कर विकसित हो रहे सामाजिक मूल्यों के परिप्रेक्ष्य में विश्लेषित किया गया है। इसके साथ ही उनके उपन्यासों में समाज के विविध पक्षों का जिक्र मिलता है जो कि समाज के प्रति उनके विस्तृत दृष्टिकोण को उजागर करते हैं। उनके उपन्यासों में निहित सार्वभौमिक पहलू जिनमें पितृसत्तात्मक समाज, वैश्विक महामारी एवं प्राकृतिक आपदाओं से पीड़ित समाज को रेखांकित किया गया है। शोध प्रबंध की रूपरेखा के अनुसार शोध विषय को पांच अध्यायों में विभाजित किया गया है। प्रथम अध्याय 'प्रभा खेतान: वैचारिकी एवं साहित्यिक यात्रा' है। इस अध्याय में उनके उपन्यास, कविता, कहानी एवं चिंतन साहित्य का संक्षिप्त सारांश शामिल किया गया है और उनके वैचारिक आयामों को रेखांकित किया है। दूसरा अध्याय 'प्रभा खेतान के उपन्यासों में अभिव्यक्त समाज' है। इस अध्याय में उनके उपन्यासों के आधार पर मारवाड़ी समाज और बंगाल की सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक विशेषताओं का मूल्यांकन किया गया है। उनके उपन्यासों में शामिल अमेरिका एवं चीन के समाज के संदर्भ में व्यक्ति के यथार्थ जीवन का मूल्यांकन किया है। तृतीय अध्याय 'प्रभा खेतान के उपन्यासों में अभिव्यक्त स्त्री के सवाल' है। इस अध्याय में स्त्री के हालात और उसकी अस्मिता के सवाल, स्त्री के योगदान और अस्तित्व के संघर्ष, स्त्री की उपलब्धियाँ और संभावनाओं का अध्ययन किया गया है। चतुर्थ अध्याय 'प्रभा खेतान के उपन्यासों में पितृसत्ता एवं स्त्री चेतना का मनोवैज्ञानिक संघर्ष' है। पंचम अध्याय 'प्रभा खेतान के उपन्यासों में आधुनिकता एवं परंपरा का द्वंद्व' है।

विषय सूची

1. प्रभा खेतान : वैचारिकी एवं साहित्यिक यात्रा 2. प्रभा खेतान के उपन्यासों में अभिव्यक्ति समाज 3. प्रभा खेतान के उपन्यासों में अभिव्यक्त स्त्री के सवाल 4. प्रभा खेतान के उपन्यासों में पितृसत्ता एवं स्त्रीवादी चेतना का मनोवैज्ञानिक संघर्ष 5. प्रभा खेतान के उपन्यासों में आधुनिकता और परंपरा का द्वंद्व। निष्कर्ष। संदर्भ ग्रंथ सूची।

27. यादव (अभिषेक कुमार)

लोकनाट्य की दृष्टि से पूर्वांचल की रामलीला का सामाजिक एवं सांस्कृतिक मूल्यांकन।

निर्देशक : डॉ. मुन्ना कुमार पाण्डेय

Th 27337

सारांश

रामलीला परम्परागत रूप से रामकथा पर आधारित नाटक है। जिसका मंचन प्राय:विजयादशमी या दशहरा उत्सव पर किया जाता है। भारतीय लोकमानस में विख्यात और लोक से सीधे-सीधे जुड़े होने के कारण रामलीला को लोकनाट्य रूपों की एक शैली के रूप में स्वीकार किया जाता है। लोकनाट्यों का लोकजीवन से अत्यंत घनिष्ट सम्बन्ध होता है, जिसके कारण लोक से सम्बंधित पर्व-त्यौहारों, सामाजिक उत्सवों तथा मांगलिक कार्यों के समय इनका अभिनय किया जाता है। रामकथा को नाट्य के रूप में मंच पर प्रदर्शित करने वाली रामलीला 'हरि अनंत हरि कथा अनंता' की तरह विविध शैली वाली है। यह भारत की लगभग अधिकांश भाषाओं एवं बोलियों में अभिव्यक्त हुई है। साथ ही साथ उस समाज, क्षेत्र और स्थान की कुछ निजी विशेषता को भी समाहित कर ली है। रामलीला मात्र नाट्य रूपांतरण भर नहीं है; बल्कि भारतीय समाज, सभ्यता एवं संस्कृति की गाथा है। रामलीला मानवता का ऐसा उदाहरण प्रस्तुत करता है जिसमें कर्म,त्याग और भक्ति के रूप निहित है। रामलीला एक आदर्श व्यक्ति, परिवार और समाज तथा आदर्श राज्य की परिकल्पना को साकार रूप प्रदान करती है। रामलीला में लोक कल्याण एवं विश्व कल्याण की भावना निहित है। जो सदैव संघर्ष, त्याग, बलिदान और आदर्श जीवन का सन्देश देता है। दर्शकों को लम्बे समय तक प्रभावित करता है और सोचने-विचारने और मनन करने पर मजबूर करता है। यह वर्तमान में भारत के साथ- साथ विश्व में भी अभिनीत हो रही है और लोक कल्याण की भावना को संजीवनी प्रदान कर रही है। रामलीला को आज की वर्तमान पीढ़ी को भी समझना और जानना अतिआवश्यक है क्योंकि इसमें देश की सामाजिक एवं सांस्कृतिक निजता, वैविध्य और एकात्मकता की झलक का व्याख्यान हैं। जीवन का संघर्ष और उसकी आकांक्षा इसमें समाहित है।

विषय सूची

1. लोकनाट्य : परम्परा और विकास 2. सामाजिक और सांस्कृतिक अध्ययन अवधारणात्मक पक्ष और लोक 3. रामलीला के विविध स्वरूप और मूल्यांकन 4. पूर्वांचल की रामलीला : इतिहास, समाज और परंपरा 150 – 200 5. पूर्वांचल की रामलीला का सामाजिक और सांस्कृतिक अध्ययन । उपसंहार। परिशिष्ट । संदर्भ ग्रंथ सूची।

28. यादव (मुनेश)

हिंदी सिनेमा और भारत के सामाजिक - राजनीतिक विमर्श की गतिकी (1985 से 2019 तक)।

निर्देशक : प्रो. चन्द्रशेखर

Th 27339

सारांश

प्रस्तुत शोध विषय पाँच अध्यायों में विभक्त है। प्रथम अध्याय में सिनेमा के संपूर्ण विकास क्रम को परिस्थिति और समय के अनुसार बदलते हुए दिखाया है। दूसरे अध्याय में सामाजिक-राजनीतिक विमर्श के साथ-साथ समयानुसार आये नये विमर्शों यथा - दलित विमर्श, स्त्री विमर्श,आदिवासी विमर्श,किन्नर विमर्श,पर्यावरण विमर्श को परिभाषित किया गया है।तीसरे अध्याय में सिनेमा में अभिव्यक्त समाज की संरचना और उसकी अच्छाई व बुराई को प्रदर्शित किया गया है। चौथे अध्याय में सिनेमा में राजनीति और उसके यथार्थवादी चरित्र को दिखाया गया है। पाँचवे अध्याय में अन्य विमर्शवादी चिंतन को सिनेमा में दिखाया गया है।

विषय सूची

1. हिन्दी सिनेमा : एक ऐतिहासिक अवलोकन 2. भारत के सामाजिक – राजनीतिक विमर्श 3. हिन्दी सिनेमा में अभिव्यक्त सामाजिक विमर्श 4. हिन्दी सिनेमा में अभिव्यक्त राजनीतिक विमर्श 5. विमर्शवादी चिंतन और हिन्दी सिनेमा। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

29. यादव (राणा प्रताप)

स्वातंत्र्योत्तर रंग तकनीक और हिंदी रंगमंच।

निर्देशक : प्रो. शोभा कौर

Th 27340

सारांश

तकनीकी प्रयोग तथा कथ्य की दृष्टि से हिन्दी नाटक और रंगमंच के विकास में नया उन्मेष वस्तुतः स्वतंत्रता के पश्चात दिखाई पड़ता है। इस काल के प्रारम्भिक रंगमंचीय नाट्य कुछ विश्वविद्यालयों और छोटी संस्थाओं तक सीमित रहे। लेकिन सन् 1952 ई. में संगीत नाटक अकादमी व इसके अलावा नाट्य केंद्र स्कूल ऑफ ड्रेमेटिक आर्ट (1955 इलाहाबाद), थिएटर यूनिट (1956 मुंबई), अनामिका (1958 कलकत्ता), नया थिएटर (1959), राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय (1959), नाट्य संघ (दिल्ली), दर्पण (कानपुर), श्री आर्ट्स क्लब, दिल्ली आर्ट थिएटर, इंद्रप्रस्थ थिएटर, यात्रिक थिएटर, कला साधना मंदिर आदि की स्थापना ने रंगक्षेत्र मे नाटककारों और रंगकर्मियों के लिए प्रेरणा का वातावरण उपस्थित कर दिया, जिसने छठे दशक की प्रयोगशील नाट्य परंपरा और उसके बाद की पृष्ठभूमि निभाई। इसके साथ ही स्वतंत्रता-उपरांत नाट्य मंचन के क्षेत्र में वैज्ञानिकता के कारण तकनीकी प्रयोगों का वर्चस्व बढ़ा और रंगमंच (Theatre) के लिए नए-नए उपकरणों का इस्तेमाल भी होने लगा, जिससे उपरोक्त संस्थाएँ भी अछूते नहीं रहे। हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में आधुनिकता बोध तो उन्नीसवीं शताब्दी से ही देखने को मिलता है, लेकिन तकनीकी (Techonology) के संदर्भ में अगर बात करें तो इसका विकास भारत में बीसवीं शताब्दी में हुआ। खासकर स्वतंत्रता के उपरांत इसका विकास अपने चरम पर रहा। इस तकनीकी विकास में नये-नये व विभिन्न प्रकार के उपकरणों का आविष्कार शामिल था। गौरतलब है कि इन उपकरणों के इस्तेमाल से भारतीय रंगमंच भी अछूते नहीं रहे और नाट्य मंचन के क्षेत्र में एक ऐतिहासिक परिवर्तन

आया। स्वतंत्रता-पूर्व नाट्य मंचन के लिए निर्देशक और अभिनेता को जितनी कठिनाई का सामना करना पड़ता था, स्वतंत्रता-पश्चात यह कार्य उतना ही आसान हो गया।

विषय सूची

1. रंगमंच और रंग - तकनीक : अवधारणा और स्वरूप 2. स्वतंत्रता पूर्व रंग - तकनीक और हिन्दी रंगमंच 3. **स्वातंत्र्योत्तर** रंग - तकनीक और हिन्दी रंगमंच 4. समसामायिक रंग - तकनीक : परंपरा और आधुनिकता का सुमेल। उपसंहार। परिशिष्ट । संदर्भ ग्रंथ सूची।

30. यादव (शेषधर)

अवधी लोकगीतों में समाज और संस्कृति।

निर्देशक : प्रो. ज्ञानतोष कुमार झा

Th 27341

सारांश

मनुष्य के जीवन और उसकी परिधि में जो भी वस्तुएँ सुलभता से उपलब्ध होती हैं। वह उनकी बहुत कद्र नहीं करता है। उन्हें निरंतरता में किस तरह बनाये और बचाये रखना है। वह उसके विषय में बहुत विचारशील नहीं होता है। लोक, लोकगीत, लोक की संस्कृति भी उन्हीं में से हैं। चीजें जब छीजने लगती हैं तो व्यक्ति, समाज उनके प्रति चिन्तातुर हो उठता है। उस चिन्ता में एक तरह की भावुकता होती है। यह हमारे हाथ से छूट रहा है, हमसे दूर जा रहा है। इसी तरह के भाव मन में उठते हैं। लोक और उसकी संस्कृति वैचारिक विमर्श के केंद्र में कब और क्यों आये यह विचारणीय है। तमाम अध्ययन के पश्चात यह माना गया कि अठारहवी शताब्दी के अन्त और उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में जब व्यापारी, मशीनी एवं पूँजीवादी सभ्यता में आदमी `जन` का लोप होने लगा तो युरोप के बौद्धिक वर्ग में उस `जन` को खोजने का रुझान बढ़ा। इस लुप्त हो रहे जन की खोज के लिए उन्होंने सबसे पहले उनकी लोकप्रिय और पारंपरिक संस्कृति को खोजने का कार्य शुरु किया जो इस सभ्यता में धीरे-धीरे विलुप्त हो रही थी। दुनिया के तमाम युरोपिय उपनिवेशों में से भारत भी एक था। यहाँ उद्योग धंधों की स्थापना देर से हुई। बद्रीनारायण जी समाजविज्ञानी हैं। भारत में लोक और उसकी संस्कृति की खोज-बीन के कारणों पर प्रकाश डालते हुए लिखते हैं-भारत में इसका संकलन दो प्रवृत्तियों के कारण हुआ। भारत में कार्यरत औपनिवेशिक अधिकारियों ने शासित को जानने, समझने के उद्देश्य से इसका संकलन किया। बीसवीं शताब्दी में कुछ राष्ट्रवादी कवियों ने अपनी संस्कृति को गौरवमण्डित करने के लिए लोक संस्कृति से सहारा लेने हेतु इसका संकलन किया।" भारत में लोक और उसकी संस्कृति की खोज में संलग्न होने वाले औपनिवेशिक इतिहासकारों और समाजशास्त्रियों की चिंता अलग थी। वे लुप्त हो रही `जन` और उसकी संस्कृति में रुचि इसलिए दिखा रहे थे कि उससे भारतीय सामाजिक संरचना को समझना आसान था। उपनिवेश को मजबूत बनाने के लिए दोस्त और दुश्मन की पहचान करना आसान था। बाद में कुछ भारतीय लेखक, विचारक भी इस कार्य में शामिल हुए। जिनमें पं कृष्णदेव उपाध्याय, पं. रामनरेश त्रिपाठी, पं. विद्यानिवास मिश्र आदि का नाम उल्लेखनीय है। परवर्ती समय में अन्य लोगों जैसे की देवेन्द्र सत्यार्थी, महेश प्रताप नारायण श्रीवास्तव, विद्या विंदु सिंह आदि ने भी इस क्षेत्र में

सराहनीय कार्य किया। इन सबने संकलन-संपादन का काम तो कर दिया। लेकिन उसके बाद जो भावों के खुलने की दुनिया थी उसका कपाट बंद छोड़कर ही किनारा कर लिए।

विषय सूची

1. लोक और लोक संस्कृति : एक विश्लेषण 2. अवधी लोक संस्कृति : स्वरूप, क्षेत्र और विस्तार 3. अवधी लोकगीतों के विविध रूप 4. अवधी लोकगीतों में चित्रित समाज 5. अवधी लोकगीतों का सांस्कृतिक पक्ष 6. उत्तर - आधुनिक समय में अवधी लोकगीतों की प्रासंगिकता । उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

31. यादव (सुरेन्द्र सिंह)

तुलसी कविता के सामाजिक संदर्भ और मुग़लकाल (विशेष संदर्भ : विनयपत्रिका, कवितावली, दोहावली, हनुमानबाहुक)।

निर्देशक : प्रो. बजरंग बिहारी तिवारी

Th 27342

सारांश

तुलसीदास और अकबर समकालीन हैं। दोनों महान व्यक्तित्व। एक ने राजनीति के माध्यम से इतिहास में नये प्रतिमान स्थापित किये, तो एक ने साहित्य के माध्यम से। परन्तु दोनों के बीच एक गहरी कश-म-कश दिखाई देती है। अकबर के शासनकाल को मुग़लकाल का `स्वर्णकाल` कहा जाता है, जबकि तुलसी कविता इसी कालखण्ड को `दुराज` कहकर संबोधित करती है। मुग़लकाल को वैभव का समय कहा जाता है, इसके बरक्स तुलसी कविता दरिद्रता-दुख से जूझ रहे तत्कालीन समाज को अभिव्यक्त करती है। अकबर के समय को इतिहास में 'सुशासन' की तरह देखा जाता है, जबकि तुलसी कविता राजतंत्र के परत दर परत शोषण से त्रस्त जनता की आवाज बनती है। मुग़लकालीन वैभव के बरक्स तुलसी कविता दिखाती है कि किस प्रकार समाज भुखमरी, बेरोज़गारी, बदहाल चिकित्सा व्यवस्था और किंकर्तव्यविमूढ़ शासनतंत्र की दुश्वारियों से कराह रहा होता है। यह कश-म-कश क्यों है, और तुलसी कविता में अभिव्यक्त इन सामाजिक संदर्भों के निहितार्थ क्या हैं, प्रस्तुत शोध प्रबन्ध इस दायित्व का निर्वहन है। प्रस्तुत शोध प्रबन्ध जीवन यात्रा से गुजरते हुए इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि तुलसीदास मध्यकाल के सर्वाधिक कठिन आत्मसंघर्षी रचनाकार हैं, और यह संघर्ष सिर्फ रचनाकार तुलसी का ही संघर्ष नहीं है, बल्कि इसमें तत्कालीन समाज की जनता का भी संघर्ष समाहित है। तुलसी के कृतित्व पर तरह तरह के सवाल उठते हैं। तुलसीदास की सम्यक रचना-यात्रा से गुजरने के बाद प्रस्तुत शोध प्रबन्ध इस मत का प्रस्ताव रखता है कि तुलसी झटके से ख़ारिज कर दिये जाने वाले रचनाकार नहीं हैं। उनकी कविता सामंती ढाँचे से प्रभावित तो है, मगर इस ढाँचे को ढहा देने वाले पर्याप्त विचार भी तुलसी अभिव्यक्त करती हैं, और मजबूती से अभिव्यक्त करती है। प्रस्तुत शोध प्रबन्ध इस बात को मजबूती को सामने रखता है कि तुलसी कविता का अंततः उद्देश्य 'परहित' प्रेरित समतामूलक समाज की स्थापना है।

विषय सूची

1. महाकवि तुलसीदास की जीवनयात्रा 2. महाकवि तुलसीदास की रचनायात्रा 3. मुग़लकालीन परिवेश : इतिहासकारों की नजर से 4. सामंतवाद और तुलसी कविता 5. मुग़लकाल और तुलसी कविता : इतिहास बनाम साहित्य सामंतवाद। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

32. राजन कुमार

राहुल सांकृत्यायन के यात्रा वृत्तान्तों में परंपरा और आधुनिकता।

निर्देशक : डॉ. जय विनोद कुमार

Th 27888

सारांश

मनुष्य के बाह्य और आंतरिक विकास के साथ यात्रा का गहरा और अटूट संबंध रहा है। आदि मानव से आधुनिक मानव बनने की प्रक्रिया में मनुष्य की यायावरी वृत्ति ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। यात्रा एक ओर बाह्य जगत के सत्यों से उसका परिचय कराती है तो दूसरी ओर स्वयं को भी जानने-समझने का अवसर प्रदान करती है। उसकी भावनाओं, विचारों, कल्पनाओं को जागृत करती है और इसके माध्यम से उसकी रचनात्मकता और सर्जनात्मकता क्षमता में वृद्धि करती है। यात्रा साहित्य की परंपरा ऐतिहासिक युग में प्राचीन काल से मिलनी शुरू हो जाती है। आधुनिक काल से पूर्व यात्रा साहित्य के अंतर्गत अलग-अलग भाषाओं में कभी छिटपुट व्यक्ति प्रयास मात्र या फिर सीमित संख्या में सुनियोजित यात्राओं के विवरण और ग्रंथ मिलते हैं। भातेन्दु युग में मुद्रण-यंत्र की स्थापना तथा रेलवे के आरम्भ एवं विकास ने क्रमशः पत्र-पत्रिकाओं एवं ग्रन्थों के प्रकाशन तथा यात्रा को प्रसारित करने का काम किया। यूरोप में भी व्यापारिक क्रांति ने अच्छी सड़कों, नहर, रेल, जहाज आदि को बढ़ावा दिया जिससे यात्रा-साहित्य का विकास हुआ। असल में यात्रा साहित्य अपने आरंभिक दौर में वर्णनात्मक लेखों के रूप में प्रकाशित हुआ था। बाद में यात्रा-वृत्तान्त को विधा के रूप में प्रणयन करने का काम बीसवीं सदी के महान यायावर राहुल सांकृत्यायन करते हैं। यात्रा को विधा के रूप में स्थापित करने वाले यायावर राहुल सांकृत्यायन ने इस विधा के लिए एक नए शास्त्र की रचना की और देश-विदेश का कोना-कोना देखकर अनेवाली पीढ़ी के मानस पर यात्रा लेखन के लिए प्रोत्साहन में अपनी गहरी छाप छोड़ी। उन्होंने देश-विदेश दोनों में नए रास्तों की खोज कर उन पर चलने और नए रास्तों के अन्वेषन का मार्ग प्रशस्त किया। विश्व के अनेक देशों की यात्राएं कर उन्होंने विश्व में भारत की एक नयी छवि बनाई।

विषय सूची

1. यात्रा वृत्तांत का स्वरूप और महत्व 2. राहुल सांकृत्यायन का व्यक्तित्व और कृतित्व 3. परंपरा और राहुल सांकृत्यायन 4. आधुनिकता और राहुल सांकृत्यायन 5. राहुल सांकृत्यायन के साहित्य का शिल्पगत सौंदर्य : संक्षिपत विश्लेक्षण । उपसंहार। परिशिष्ट : सन्दर्भ ग्रंथ सूची।

33. लूटिंग (गैन)

अमरकांत की कहानियाँ : संवेदना और भाषा ।

निर्देशक : प्रो. रामनारायण पटेल

Th 27343

सारांश

अमरकांत प्रेमचंद के यथार्थवादी परंपरा के रचनाकारों में से एक हैं । इन कहानियों की व्यक्तियों की मर्मस्पर्शी संवेदना एवं बेबसी को अमरकांत की सजग भाषा के माध्यम से समाज के समक्ष प्रस्तुत करना शोध विषय का उद्देश्य है । प्रस्तुत शोध-प्रबंध को छह अध्यायों में विभाजित किया गया है । प्रथम अध्याय 'संवेदना और भाषा : कथा-सृजन के मूलाधार' में संवेदना एवं भाषा के अर्थ एवं प्रकार की चर्चा करते हुए कथा-सृजन में संवेदना एवं भाषा का स्वरूप एवं महत्त्व पर प्रकाश डाला गया है । द्वितीय अध्याय 'हिंदी की नई कहानी और उसका परिवेश' में ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य से देखने का प्रयास किया गया कि हिंदी कहानी की विकास यात्रा में प्रेमचंद पूर्व, प्रेमचंद युगीन और प्रेमचंदोत्तर कहानी की रूपरेखा क्या है? ख़ासकर नई कहानी के विकास एवं महत्त्व पर विस्तार चर्चा किया गया है । तृतीय अध्याय 'प्रेमचंद का आलोचनात्मक यथार्थवाद और अमरकांत' के अंतर्गत आलोचनात्मक यथार्थवाद को परिभाषित करते हुए प्रेमचंद का अध्ययन किया गया है । साथ ही यथार्थवादी कहानीकार प्रेमचंद से लेकर अमरकांत तक का तुलनात्मक अध्ययन एवं विवेचन किया गया है । चतुर्थ अध्याय 'अमरकांत का रचना-संसार' में उनके व्यक्तित्व, कृतित्व एवं अवदान पर विचार किया गया है । पंचम अध्याय 'अमरकांत की कहानियाँ : संवेदना के विविध आयाम' में व्यक्त व्यक्तिगत संवेदना, सामाजिक संवेदना, राजनीतिक संवेदना, आर्थिक संवेदना और धार्मिक संवेदना को उजागर किया गया है । षष्ठ अध्याय 'अमरकांत की कहानियाँ : भाषिक विश्लेषण' में भाषा-प्रयोग, अलंकार-प्रयोग, लोकोक्ति-मुहावरे पर विचार किया गया है । अंत में 'उपसंहार' है जो हमारे शोध प्रबंध का सार है । अंत में सहायक ग्रंथ-सूची समाहित है ।

34. वर्मा (एकता)

विश्व साहित्य की अवधारणा और `वर्ल्ड लिटरेचर टुडे` पत्रिका में प्रकाशित हिन्दी साहित्य का मूल्यांकन (वर्ल्ड लिटरेचर टुडे` पत्रिका के वर्ष 1980 से 2020 तक के विशेष संदर्भ में)।

निर्देशिका : प्रो. शोभा कौर

Th 27344

सारांश

विश्व साहित्य साहित्य की वैश्विक संस्कृति के निर्माण को प्रस्तावित करता है। यह अवधारणा संपूर्ण विश्व को एक इकाई मानती है और मनुष्य की अनुभूतियों, संघर्ष एवं आवश्यकताओं की एकरूपता के आधार पर साहित्य के लेखन व पठन-पाठन को वैश्विक बनाए जाने का आग्रह करती है। वे कृतियाँ जो स्रोत संस्कृति से लक्ष्य संस्कृति तक पहुँचकर प्रभावी बनी रहती हैं, विश्व साहित्य की कृतियाँ कहलाती हैं। `वर्ल्ड लिटरेचर टुडे` विश्व साहित्य को प्रचारित प्रसारित करने वाली अग्रणी पत्रिका है, इसमें विश्व की अन्य भाषाओं की तरह हिन्दी साहित्य की कृतियाँ प्रतिनिधि रूप में छापी गई हैं। यह पत्रिका हिन्दी भाषा एवं साहित्य के चयन में साम्राज्यवादी, प्राच्यवादी, उपनिवेशवादी एवं नव-उपनिवेशवादी रुख़ अपनाती है इसलिए उसमें भारत के औपनिवेशिक संघर्ष के साहित्य, हिन्दी के अपने साहित्यिक आंदोलनों के साहित्य, उसकी जटिल भाषा संस्कृति की समझ का अभाव मिलता है। पश्चिमी शैली के

या अंग्रेज़ी भाषी साहित्यकार इस पत्रिका में विशेषाधिकार प्राप्त करते हैं इसलिए पत्रिका वर्चस्व की संस्कृतियों को पोषित करती दिखाई देती है। उदारीकरण के दौर में, संस्कृति में बाज़ार की पैठ बनाने हेतु हिन्दी साहित्य को खूब प्रतिनिधित्व मिलता है किंतु बाद के दशकों में पत्रिका हिन्दी की पहचान एक आंचलिक भाषा के रूप में सीमित कर देती है।

विषय सूची

1. विश्व साहित्य की अवधारणा एवं सिद्धांत 2. वर्ल्ड लिटरेचर टुडे (WLT) पत्रिका : विविध आयाम 3. वर्ल्ड लिटरेचर टुडे पत्रिका में प्रकाशित हिन्दी साहित्य का विश्लेषण 4. 'वर्ल्ड लिटरेचर टुडे' पत्रिका में प्रकाशित भारतीय साहित्य का भाषिक अध्ययन। निष्कर्ष। परिशिष्ट। संदर्भ ग्रंथ सूची।

35. वर्मा (सचिन कुमार)

विवेकी राय का निबंध साहित्य : वस्तु और शिल्प।

निर्देशिका : प्रो. रचना सिंह

Th 27889

सारांश

विवेकी राय का निबंध साहित्य : वस्तु और शिल्प विवेकी राय हिंदी साहित्य के सुप्रसिद्ध और प्रतिष्ठित साहित्यकार हैं । उनका साहित्य हिंदी साहित्य की अमूल्य निधि है ।विवेकी जी के पास लेखन की मौलिक संवेदना थी । उन्होंने हिंदी साहित्य की अनेक विधाओं में सृजन कार्य किया किन्तु वे अपनी विशिष्ट निबंध शैली से सर्वाधिक जाने गए हैं । उन्होंने विशेष रूप से ग्रामीण समाज की विसंगतियों, अव्यवस्था, दुर्दशा, राजनीतिक अनीति - अन्याय इत्यादि इन सभी विषयों पर लिखा है । विवेकी राय के अभिव्यक्ति के मुख्य विषय भाषा ,संस्कृति, गाँव और राष्ट्र है। संस्कृति के अद्य: पतन पर भी उनका मौलिक चिंतन प्रकट हुआ है । परिवर्तित गाँव और आधुनिकता के कारण भारतीय संस्कृति अपना अस्तित्व खोती जा रही है । यह गाँव के लिए ही नहीं, देश के लिए भी खतरा है । सरलता, सादगी, निश्छल, प्रवृत्ति और सच्चाई विवेकी राय की स्वभावगत विशेषताएं हैं। उनके बोलने का तरीका, अदब अंदाज और शैली में सरसता है जो इनके निबंधों के वस्तु पक्ष में अभिव्यक्त हुई है । उन्होंने भाषा की वर्तमान स्थिति पर अपने कई निबंधों में चर्चा की है । साथ ही सरकार की भाषा संबंधी गलत नीतियों की आलोचना भी की है। विवेकी राय भोजपुरी प्रेमी और हिंदी सेवी भी रहे हैं । भोजपुरी के शब्द, कहावतें और मुहावरे हिंदी साहित्य के सौंदर्य में और भी अधिक निखार एवं सरसता लाते हैं । विवेकी राय जी हिंदी के साथ भोजपुरी में साहित्य रचना करते आए हैं इसलिए जब हम विवेकी राय के शिल्प को देखते हैं तो उसमें हिंदी के साथ भोजपुरी बोली के शब्द भी साथ-साथ आते जाते हैं । इसके साथ ही आंचलिक प्रभाव के कारण वहां के मुहावरों और लोकोक्तियों का भी प्रभाव दिखाई पड़ता है । ललित निबंधकार होने के कारण उनके निबंधों में प्रतीकात्मकता, व चित्रात्मकता का भी समावेश भी उपलब्ध है । सारांश: यह कहना अनुचित न होगा कि इनके निबंध साहित्य का वस्तु पक्ष एवं शिल्प पक्ष हिंदी साहित्य के लिए एक उपलब्धि बन चुका है।

विषय सूची

1. हिन्दी का निबंध साहित्य : एक अनुशीलन 2. विवेकी राय : व्यक्तित्व एवं कृतित्व 3. विवेकी राय की वैचारिकी के निमित्त करक 4. विवेकी राय का निबंध साहित्य और वस्तु पक्ष 5. विवेकी राय का निबंध साहित्य और शिल्प पक्ष। उपसंहार। सन्दर्भ ग्रंथ सूची।

36. श्रीवास्तव (पंकज कुमार)

उत्तर-औपनिवेशिक विमर्श के आलोक में अज्ञेय और निर्मल वर्मा के सांस्कृतिक चिंतन का आलोचनात्मक अध्ययन।

निर्देशक : डॉ. विरेंद्र भारद्वाज

Th 27346

सारांश

'औपनिवेशिक' के विविध आयामों की पहचान और 'विउपनिवेशीकरण' का प्रयास 'उत्तर-औपनिवेशिक' विमर्श का विशेष क्षेत्र है। हिन्दी में अज्ञेय और निर्मल वर्मा ऐसे रचनाकार हैं, जिनके यहाँ हमें एक गंभीर उत्तर-औपनिवेशिक दृष्टि मिलती है। इनके विश्लेषण में औपनिवेशिक प्रभाव अवरोध की तरह सामने उपस्थित है, जिसके परे जाए बिना अपनी अस्मिता को पाना संभव नहीं हैं। इसलिए ये रचनाकार सबसे पहले उन मूल्यों पर ही सवाल खड़े करते हैं जिनके सहारे औपनिवेशिक शासकों ने अपनी श्रेष्ठता को स्थापित किया था। दोनों ही लेखकों के चिंतन का केन्द्रीय प्रत्यय कालबोध का अंतर है। इसी कालबोध के अंतर के सहारे दोनों लेखक यूरोप की अन्यता सिद्ध करते हैं। ये पश्चिम के इतिहासबोध के बरक्स भारत के परम्पराबोध को रखते हैं। इस कालबोध के अंतर के कारण कलाबोध का अंतर भी पैदा हो जाता है। इसलिए ये रचनाकार कला,साहित्य और सृजनकर्म को भारतीय सन्दर्भों में परिभाषित करने का प्रयास करते हैं। अज्ञेय और निर्मल वर्मा यूरोप के वैज्ञानिक विकास से अभिभूत होकर यूरोप की दुहाई नहीं देते बल्कि उसके कारण नष्ट होती मनुष्यता की ओर इशारा करते हुए, उनमें छुपे औपनिवेशिक प्रभावों को उजागर करते है। उत्तर-औपनिवेशिक चिंतन के प्रभाव में उपजी लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं में निहित पूंजीवादी चरित्रों ने जिस अस्मिता और मनुष्य के अस्तित्व को पुनः नकारना प्रारंभ किया, उसी की पहचान अज्ञेय और निर्मल वर्मा के निबंध में प्रमुख रूप से दिखाई देती है। हालाँकि राष्ट्रीय अस्मिता के भीतर स्थित अस्मिताओं पर इन लेखकों ने विचार नहीं किया है। इसे इन लेखकों की पोलिटिकल स्ट्रेटेजी की तरह भी समझा जा सकता हैं। अपनी अस्मिता की बात करते हुए यह लेखक पश्चिमी विद्वानों से भी प्रेरित होते हैं लेकिन आक्रांत नहीं होते । चिंतन की धार इनकी अपनी है।

विषय सूची

1. उत्तर औपनिवेशिक विमर्श के विविध आयाम 2. हिन्दी आलोचना की परम्परा में 'औपनिवेशिक' की पहचान 3. अज्ञेय और निर्मल वर्मा का रचना संसार और उत्तर - औपनिवेशिकता 4. उत्तर - औपनिवेशिक विमर्श और अज्ञेय का सांस्कृतिक चिंतन 5. उत्तर औपनिवेशिक विमर्श और निर्मल वर्मा का सांस्कृतिक चिंतन 6. अज्ञेय और निर्मल वर्मा के सांस्कृतिक चिंतन का तुलनात्मक अध्ययन। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथ सूची।

37. सिंह (पंकज कुमार)

हिंदी कथा-साहित्य में आपातकाल के स्वरूप का विश्लेषण।

निर्देशक : प्रो. अल्पना मिश्र

Th 27347

सारांश

प्रधानमंत्री इंदिरा गाँधी ने 26 जून 1975 को आपातकाल लागू किया था तो संविधान द्वारा प्रदत्त समस्त मौलिक अधिकार निलंबित हो गए थे। अभिव्यक्ति की आजादी को देश के लिए खतरा मान लिया गया था। इन स्थितियों ने हिन्दी कथा-साहित्य को भी भीतर से प्रभावित किया। निर्मल वर्मा ने अभिव्यक्ति की आजादी के सवाल को अपने उपन्यास रात का रिपोर्टर में दिखाया है तो वहीं राही मासूम रज़ा ने अपने उपन्यास कटरा बी आर्ज़ू में इस समय की राजनीति पर करारा व्यंग्य किया है। ठीक इसी तरह फणीश्वरनाथ रेणु ने अपनी कहानी 'आत्मसाक्षी' में यह दिखाने का प्रयास किया है कि किस प्रकार समाज में मूल्यों का क्षरण बढ़ रहा है। काशीनाथ सिंह ने अपनी कहानी 'लाल किले के बाज' में भी समाजवाद का चोला पहने जादू को दिखाते हैं, जो मौका मिलते ही अपना रूप बदल लेते हैं। उनके लिए क्रांति के अर्थ बदल जाते हैं। उगता हुआ लाल सूर्य, लाल झण्डा, लाल चुनर सब कुछ बेकार हो जाता है। कथाकार हिंमाशु जोशी ने अपने उपन्यास 'समय साक्षी है' में इंदिरा गाँधी के समय को रेखांकित किया है। इस उपन्यास के भीतर वे यह दिखाने का प्रयास करते हैं कि भ्रष्टाचार, दलबदल, पदलोलुपता आदि ने भारतीय लोकतंत्र की जड़ों को उखाड़ने का प्रयास किया है। महीप सिंह ने अपनी कहानी 'निशाना' में पात्रों के नामों को प्रतीकात्मक शैली में रखकर इस समय की विभीषिका को दिखाने का प्रयास किया है। इसी तरह बदीउज्जमाँ ने अपने उपन्यास 'छठा तंत्र' में बिल्ली और चूहों के मध्य संघर्ष को दिखाकर तानाशाही शासन तंत्र के चरित्र को उजागर करने का प्रयास किया है। 'कवायद' कहानी में पंकज बिष्ट ने आपातकाल में नसबंदी योजना की सच्चाइयों का पर्दाफाश किया है। मुद्राराक्षस ने अपने उपन्यास 'शांति भंग' में आपातकाल के समय हो रही गिरफ़्तारियों तथा वाम व दक्षिण पंथ के मध्य टकराव को दिखाया है।

विषय सूची

1. आपपतकाल का समय और उसकी पृष्ठभूमि 2. वस्तुगत परिप्रेक्ष्य करी जटिलता और संघर्ष की दिशाएँ 3. कथा-साहित्य : प्रतिरोध और मुक्ति के स्वर 4 कथा-साहित और लोकतंत्र का भविष्य 5. कथा-साहितः भाषा एवं शिल्पगत प्रयोग की आवश्यकता। उपसंहार। संदर्भ ग्रंथानुक्रमणिका।